विश्व–नवनिर्माण की अनूठी ईश्वरीय योजना

1.	मैं कौन?
2.	तीन लोक
3.	परमपिता परमात्मा शिव और उनके दिव्य कर्तव्य
4.	सर्व आत्माओं का पिता एक है
5.	शिव और शंकर
6.	परमपिता परमात्मा सर्वव्यापी नही
7.	सहज राजयोग
8.	ब्रह्माकुमारी विद्यालय (ब्र०वि०) और आध्यात्मिक विद्यालय (आ०वि०) की शिक्षाओं में अंतर
9.	भविष्यवाणी
10.	बाप के वर्तमान साकार पार्ट के प्रति प्रूफ एवं प्रमाण
11.	त्रिमूर्ति
12.	सृष्टि–चक्र
13.	लक्ष्मी–नारायण
14.	कल्पवृक्ष
15.	सीढ़ी
16.	गीता के निराकार भगवान शिव–शंकर भोलेनाथ या साकार श्री कृष्ण की आत्मा उर्फ दादा लेखराज?

'ए' साइड (कैसेट)

चित्र नं. 1 (**मैं कौन?**) :–

शरीर अलग चीज़ है, आत्मा अलग चीज़ है और दोनों मिलकर जीवआत्मा अर्थात् जीवित आत्मा बनती है। 'जीवित आत्मा' का मतलब है शरीर सहित काम करने वाली चैतन्य शक्ति। नहीं तो यह आत्मा भी काम नहीं कर सकती और यह शरीर भी नहीं काम कर सकता। इसका मिसाल एक मोटर और ड्राइवर से दिया हुआ है। जैसे मोटर होती है, ड्राइवर उसके अन्दर है तो मोटर चलेगी, ड्राइवर नहीं है तो मोटर नहीं चलेगी। मतलब यह है कि आत्मा, (एक भाई ने कहा– वायु है), वायु नहीं है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश– ये पाँच जड़ तत्व तो अलग हैं जिनसे यह शरीर बना है। इन पंच तत्वों के बने शरीर में से आत्मा निकल जाती है तो भी शरीर के अन्दर पाँच तत्व रहते हैं। उनको जलाया जाता है या मिट्टी में दबाया जाता है। वे तो जड़ तत्व हैं; लेकिन आत्मा उनसे अलग क्या चीज़ है? वह मन और बुद्धि स्वरूप एक अति सूक्ष्म ज्योतिर्बिन्दु है, जिसको गीता में कहा गया है& **"अणोरणीयांसमनुस्मरेत् यः।"** (गीता 8/9) अर्थात् अणु से भी अणुरूप बताया। अणु है; लेकिन ज्योतिर्मय है। उस मन–बुद्धि रूपी चैतन्य अणु में अनेक जन्मों के संस्कार भरे हुए हैं। मन–बुद्धि को ही आत्मा कहा जाता है। वेद की एक ऋचा में भी बात आई है– **'मनरेव आत्मा'** अर्थात् मन को ही आत्मा कहा जाता है। आदमी जब शरीर छोड़ता है अर्थात् आत्मा शरीर छोड़ती है तो ऐसे थोड़े ही कहा जाता है कि मन–बुद्धि रह गई और आत्मा चली गई। सब कुछ है; लेकिन मन–बुद्धि की शक्ति चली गई अर्थात् आत्मा चली गई।

तो मन–बुद्धि की जो पावर है वास्तव में उसका ही दूसरा नाम आत्मा है। मन–बुद्धि में इस जन्म के और पूर्व जन्मों के संस्कार भरे हुए हैं। संस्कार का मतलब है– अच्छे–बुरे जो कर्म किए जाते हैं, उन कर्मों का जो प्रभाव बैठ जाता है उसको कहते हैं 'संस्कार'। जैसे किसी परिवार में कोई बच्चा पैदा हुआ, वह कसाइयों का परिवार है, बचपन से ही वहाँ गाय काटी जाती है, उस बच्चे से, जब बड़ा हो जाए, पूछा जाए कि तुम गाय काटते हो, बड़ा पाप होता है, तो उसकी बुद्धि में नहीं बैठेगा; क्योंकि उसके संस्कार ऐसे पक्के हो चुके हैं। इसी तरीके से ये संस्कार एक तीसरी चीज़ है। तो मन, बुद्धि और संस्कार– ये तीन शक्तियाँ मिल करके आत्मा कही जाती है।

चित्र नं. 2 (**तीन लोक**) :–

आत्मा इस सृष्टि में आई कहाँ से? ये कीट, पशु, पक्षी, पतंगे– वास्तव में ये सब आत्माएँ हैं। सबके अन्दर आत्मा है। इस चित्र में यह है पृथ्वी और ये हैं सूरज, चाँद, सितारे, आकाशतत्व। गीता में एक श्लोक आया है, उसमें अर्जुन को भगवान ने बताया है कि मैं कहाँ का रहने वाला हूँ– **"न तद् भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः। यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद् धाम परमं मम।"** (गीता 15/6) अर्थात् जहाँ सूरज, चाँद, सितारों का प्रकाश नहीं पहुँचता, जहाँ अग्नि का प्रकाश नहीं पहुँचता, वह मेरा परे–ते–परे धाम है, जहाँ का मैं रहने वाला हूँ। यह श्लोक इस बात का प्रमाण है कि भगवान परमधाम के रहने वाले हैं, सर्वव्यापी नहीं हैं। यहाँ साबित किया गया है कि पाँच तत्वों की दुनिया से परे एक और सदा प्रकाशित छठा तुरीया तत्व है **'ब्रह्मलोक'**, जिसे अंग्रेजी में कहा जाता है **'सुप्रीमएबोड'**, मुसलमानों में कहा जाता है **'अर्श'**, **"खुदा अर्श में रहता है, फर्श में नहीं।"** लेकिन अब तो वे भी सर्वव्यापी मानने लगे हैं कि खुदा जर्रे–2 में है। जैनी लोग उसको **'तुरीया धाम'** मानते हैं। तात्पर्य यह है कि हर धर्म में उस धाम की मान्यता है। हम सब आत्माएँ उस परमधाम की रहने वाली हैं, जहाँ पर सुप्रीम सोल ज्योतिर्बिन्दु भी है, जिसे हिन्दुओं में **'शिव'** कहते हैं। वे जन्म–मरण के चक्र से न्यारे हैं। बाकी जितनी भी आत्माएँ हैं वे जन्म–मरण के चक्र में आ जाती हैं। परमधाम में उन आत्माओं की स्थिति का क्रम क्या है? जितना ही इस सृष्टि पर आ करके श्रेष्ठ कर्म करने वाली आत्मा है वह उतना ही परे–ते–परे शिव के नज़दीक रहने वाली होगी और जितने ही निष्कृष्ट कर्म करने वाली, पार्ट बजाने वाली आत्मा है, वह उतना ही नीचे की ओर। उनकी संख्या जास्ती होती है। दुष्ट कर्म करने वालों की संख्या जास्ती और श्रेष्ठ कर्म करने वाली देव आत्माओं की संख्या कम, जो 33 करोड़ कही जाती हैं। जिनकी संख्या ऊपर की ओर कम होती जाती है वे श्रेष्ठ आत्माएँ हैं।

सतयुग के आदि से जब नई सृष्टि का आवर्त्तन होता है तो सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग क्रमशः पुराने होते जाते हैं। दुनिया की हर चीज़ चार अवस्थाओं से गुजरती है; जैसे– **सतोप्रधान बचपन, सतोसामान्य किशोर अवस्था, रजोप्रधान जवानी और (तमोप्रधान) बुढ़ापा, फिर खलास।** सृष्टि का भी यही नियम है। यह चार अवस्थाओं से पसार होती है। सतोप्रधान सृष्टि को **'सतयुग'** कहा जाता है, रजोप्रधान को **'द्वापर'** कहा जाता है और तमोप्रधान को **'कलियुग'** कहा जाता है। ब्रह्मलोक से आत्माओं के उतरने का यही क्रम है कि जितनी श्रेष्ठ आत्माएँ हैं उतना ही श्रेष्ठ युग में उतरती हैं। जो 16 कला सम्पूर्ण आत्माएँ हैं वे सतयुग आदि में उतरती हैं, जो 14 कला सम्पूर्ण आत्माएँ हैं वे त्रेतायुग के आदि में उतरती हैं, जो 8 कला सम्पूर्ण आत्माएँ हैं वे द्वापर में उतरती हैं और कलियुग से कलाहीनता शुरू हो जाती है। कलाहीन आत्माएँ, जिनका धर्म दूसरों को दुःख देना ही है, जिनके लिए गीता में आया है– **"मूढा जन्मनि जन्मनि।"**(गीता 16/20) वे नारकीय योनि में आकर गिरती हैं। वे नीचतम आत्माएँ कलियुग के अन्त में आती हैं जब सारी ही आत्माएँ नीचे उतर आती हैं, जिनको वापस जाने का रास्ता नहीं मिलता, बल्कि यहीं जन्म–मरण के चक्र में आती रहती हैं और शरीर द्वारा सुख भोगते–2 तामसी बन जाती हैं।

बीज है, कई बार बोया जाएगा तो उसकी शक्ति क्षीण हो जाती है। पत्ता छोटा, फल छोटा, वृक्ष छोटा और आखरीन होते–2 वह फल देना ही बन्द कर देता है। तो ऐसे ही आत्माओं का यह हिसाब है कि जब एक बार ऊपर से नीचे आ गईं तो वे नीचे ही उतरती जाती हैं। आप इस सृष्टि के अंतिम अर्धभाग अर्थात् आज से 2500 वर्ष पूर्व की हिस्ट्री ले लीजिए। दुनिया में सुख–शान्ति, दुःख और अशान्ति के रूप में बदलती गई है या सुख–शान्ति बढ़ती गई? हिस्ट्री क्या कहती है? जैसे–2 जनसंख्या बढ़ती गई, ऊपर से

आत्माएँ उतरती गईं। तो जनसंख्या के बढ़ने से सृष्टि में दुःख और अशान्ति तो बढ़नी ही बढ़नी है, वह बढ़ती गई। एक अति (end, extremity) होती है कि जब सारी ही आत्माएँ नीचे उतर आती हैं। दुनिया में कीट, पशु–पक्षी, पतंगो, कीटाणु आदि की संख्या लगातार बढ़ रही है। देश–विदेश में इतनी कीटनाशक दवाइयाँ छिड़की जा रही हैं, तो भी उनकी संख्या में कोई कमी नज़र नहीं आ रही है। मक्खी–मच्छरों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है। आखिर ये आत्माएँ आ कहाँ से रही हैं? उसका समाधान गीता के अनुसार ही है; लेकिन स्पष्ट किसी ने नहीं किया। अभी यह बात स्पष्ट हो रही है कि ये आत्माएँ उस आत्म–लोक से आ रही हैं और इसी दुनिया में 84 के जन्म–मरण का चक्र काटते हुए अपना–2 पार्ट बजाती रहती हैं।

चित्र नं. 3 (**परमपिता परमात्मा शिव और उनके दिव्य कर्तव्य**) :–

जब सारी ही आत्माएँ आत्म–लोक से इस सृष्टि पर उतरने को होती हैं तब अन्त काल से कुछ ही पहले परमपिता परमात्मा शिव इस सृष्टि पर आते हैं और आ करके इस सृष्टि–रूपी रंगमंच की जो हीरो–हीरोइन पार्टधारी आत्माएँ हैं, कोई तो होंगी, अच्छे–बुरे पार्टधारी तो होते ही हैं। तो इस सृष्टि–रूपी रंगमंच पर कोई तो सबसे ज़्यादा श्रेष्ठ पार्ट बजाने वाले होंगे। उनको अंग्रेजों में कहा जाता है– **'एडम और ईव'**, मुसलमानों में कहा जाता है **'आदम और हव्वा'** और हिन्दुओं में कहा जाता है **"त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः। त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।"**(गीता 11/38) वे सृष्टि के आदि है। उनकी शुरुआत किसी ने नहीं बताई कि वे आदिशक्ति और आदिदेव कब से हैं, उनको जन्म देने वाला कौन है। किसी को पता ही नहीं है। हिन्दू परम्परा में उनको शंकर–पार्वती और जैनियों में **'आदिनाथ और आदिनाथिनी'** कहा जाता है। देखिए आप, शब्दों में कितना साम्य है।

पहले दुनिया में एक ही धर्म था और एकता थी। वह एकता तभी आ सकती है, **'वसुधैव कुटुम्बकम्'** की असली भावना तभी हो सकती है जबकि सारी दुनिया एक ही युगल को अपना मात–पिता मान ले। तो वे परमपिता परमात्मा शिव आते हैं, आ करके इस सृष्टि रूपी रंगमंच की हीरो–हीरोइन पार्टधारी आत्माओं (राम–कृष्ण) को उठाते हैं। वे 84 के चक्र के आखिरी जन्म में राम–कृष्ण के रूप में नहीं होते; क्योंकि 16 कला संपूर्ण कृष्ण/नारायण का राज्य तो सतयुग में था, राम का राज्य त्रेता में था। वही आत्माएँ जन्म–मरण के चक्र में नीचे उतरते–2 हमारे–आपके रूप में कहीं–न–कहीं नर रूपों में होती हैं। उन नर रूपों में परमपिता परमात्मा शिव प्रवेश करते हैं, जैसे गीता में एक शब्द आया है– **'प्रवेष्टुम्'**(गीता 11/54), मैं प्रवेश करने योग्य हूँ। कौन? वे सुप्रीम सोल शिव, जो जन्म–मरण के चक्र से न्यारे हैं। वे प्रवेश करके कृष्ण उर्फ दादा लेखराज के द्वारा पहले माँ का पार्ट बजाते हैं, जिसका नाम अपनी भारतीय परम्परा में रखा जाता है **'ब्रह्मा'**। 'ब्रह्' माने बड़ी और 'माँ' माने माँ। दुनिया में सबसे जास्ती सहन करने वाली माँ होती है। परमपिता परमात्मा भी इस सृष्टि पर आकर पहले माँ का पार्ट प्रत्यक्ष बजाते हैं, जिसके लिए अपनी भारतीय परम्परा में उनकी महिमा के गीत गाए हैं– **"त्वमेव माता च पिता त्वमेव...।"** वे इतना प्यार देते हैं, इतना प्यार देते हैं कि जो असुर हैं वे उनसे वरदान लेने के आदी हो जाते हैं। माँ का स्वभाव ऐसा होता है कि कोढ़ी, काना, कुब्जा, चोर, डकैत, लुच्चा, लफंगा बच्चा होगा उसको भी अपनी गोद से अलग नहीं करना चाहेगी। बाप कहेगा– 'हट! निकल बाहर'; लेकिन माँ गोद से अलग नहीं करेगी। ऐसे ही ब्रह्मा का पार्ट इस सृष्टि पर पहले है।

परमपिता परमात्मा शिव ब्रह्मा में प्रवेश करके जो वाणी चलाते हैं, उस वाणी का नाम पड़ता है **'मुरली'**। मुरली नाम क्यों पड़ा? आप और हम जानते हैं कि कृष्ण के हाथ में मुरली दिखाई जाती है। तो हमने समझ लिया कि कोई बाँस की मुरली होगी; लेकिन यह तो प्रतीकात्मक, लाक्षणिक और आलंकारिक कवियों की भाषा है, जो उन्होंने भागवत और महाभारत में लिखी हुई है। उसका वास्तविक अर्थ यह है कि परमपिता परमात्मा ब्रह्मा के मुख से माने बच्चा बुद्धि कृष्ण की सोल के द्वारा पहले–2 इस सृष्टि पर आकर कलियुग–अंत में जो प्यार देते हैं, मीठी वाणी सुनाते हैं, वह वाणी इतनी अच्छी लगती है कि जब लोगों को समझ में आ जाती है कि यह बात क्या है तो उससे ज़्यादा बढ़कर मीठी और सुरीली तान सारी दुनियाँ में और किसी की नहीं लगती। इसलिए उसका नाम रखा गया **'मधुर गीता'**। गीता अथवा सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ, जो

भारत का सर्वोपरि ग्रंथ है **'सर्वशास्त्र शिरोमणि गीता'**, उसको मुरली कहा जाता है। तो परमपिता परमात्मा आकर ब्रह्मा के तन से काठ की मुरली द्वारा यह ज्ञान सुनाते हैं। माँ के रूप में वे ब्राह्मणों को जन्म देते हैं। शास्त्रों में लिखा हुआ है कि ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण निकले। तो हम समझते हैं कि कोई ऐसी कलाकारी मुँह में होगी जो उन्होंने मुँह से 'हुआ' किया और ब्राह्मण निकल पड़े; लेकिन ऐसा कुछ नहीं होता। यही पुरानी कलियुगी सृष्टि होती है। इसी पुरानी सृष्टि में परमपिता परमात्मा आकर ब्रह्मा के तन में प्रवेश करके बच्चा बुद्धि मनुष्यों द्वारा समझने योग्य बेसिक ज्ञान सुनाते हैं उस ज्ञान को सुनकर जो अपने जीवन को बनाते हैं, सुधारते हैं, उन्हीं में ब्राह्मणों के संस्कार आ जाते हैं। इस प्रकार ब्राह्मणों की जो ब्रह्मा मुख से उत्पत्ति होती है उनको **'ब्रह्माकुमार या ब्रह्माकुमारी'** कहा जाता है। यह नई सृष्टि की शुरुआत की बात है जो अभी 5000 वर्ष बाद फिर से पुनरावर्तन हो रही है।

माउंट आबू से इस कार्य की शुरुआत हुई। शिव गुप्त रूप में आते हैं, जैसे गीता में कहा है– **''साधारण तन में आए हुए मुझ परमपिता परमात्मा को दादा लेखराज ब्रह्मा जैसे मूढ़मति लोग पहचान नहीं पाते।''** तो आपको जो ब्रह्मा का रूप दिखाया, यह व्यक्तित्व प्रैक्टिकल में हो चुका है। माउंट आबू में इनके द्वारा परमपिता परमात्मा शिव ने नीची कुरियों के ब्राह्मणों की स्थापना कराई थी। इनका वास्तविक नाम दादा लेखराज ही था। सिंध हैदराबाद के रहने वाले ये सिंधी ब्राह्मण थे, जिनके द्वारा यह कार्य सम्पन्न हुआ। अभी तो देश–विदेश में ढेर सारे ब्रह्माकुमारी आश्रम खुले हुए हैं। 70–75 साल के अंदर इतनी ज़बरदस्त स्थापना करना सामान्य आत्मा के बस की बात तो नहीं है। परमपिता परमात्मा शिव स्वयं ही कृ ष्ण की सोल उर्फ दादा लेखराज का नाम 'ब्रह्मा' रखते हैं और उसके द्वारा जब ब्राह्मण धर्म की स्थापना करते हैं तब ढेर सारे ब्रह्माकुमार–कुमारियाँ तैयार हो जाते हैं। परमपिता परमात्मा देखते हैं कि इन ब्राह्मण बच्चों में ही दो किस्म के बच्चे पैदा हो गए। एक, **रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद** भी ब्राह्मण थे और अपने जीवन में **गुरू वशिष्ठ, विश्वामित्र** ने भी ब्राह्मणत्व अपनाया था। गुरू वशिष्ठ, विश्वामित्र जैसों की संख्या थोड़ी हो जाती है और रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद जैसों की संख्या ढेर सारी हो जाती है। यही बात ब्रह्माकुमारी आश्रम में भी हुई। ब्रह्मा की कोख में रस लेने से पैदा हुए जो कुखवंशावली ब्रह्मा वत्स हैं, उनमें ढेर सारे दुष्ट ब्राह्मण पैदा हो गए और जो ज्ञान–योग में ब्रह्मामुख से ज़्यादा रस लेने वाले त्यागी–तपस्वी हैं, वे थोड़े रह गए। अतः क्या होता है? परमपिता परमात्मा को वह शरीर छोड़ देना पड़ता है। कृष्ण वाली सोल माना ब्रह्मा की सोल को शरीर छोड़ देना पड़ता है।

उसके बाद सन् 69 में परमपिता परमात्मा शिव राम वाली सशक्त आत्मा में सर्वथा गुप्त प्रवेश करते हैं; क्योंकि माता का भी प्यार भरा पार्ट शिव का है तो पिता का भी सख्त पार्ट उन्हीं का है। कहावत है– टेढ़ी उँगली किए बगैर घी नहीं निकलता। अब राम वाली सोल कहीं–न–कहीं तो इस सृष्टि पर होगी ना? तो उस व्यक्तित्व में, जो कि पहले से ही ब्रह्माकुमार बनी हुई होती है, उसमें वे शिव ही प्रवेश करके अपना कार्य आरम्भ करते हैं। इस कार्य के आरम्भ होने के बाद थोड़े समय के अन्दर ही ब्रह्माकुमारी संस्था में सन् 76 से स्पष्ट विभाजन नज़र आता है, जैसे सभी धर्मों में हुआ– बौद्धियों में **'हीनयान' (और) 'महायान'**, दो सम्प्रदाय हो गए; जैनियों में **'श्वेताम्बर और दिगम्बर'**, दो सम्प्रदाय हो गए; मुसलमानों में **'शिया और सुन्नी'**, दो सम्प्रदाय हो गए; क्रिश्चियन्स में **'रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट'**, दो सम्प्रदाय हो गए। ये दूसरे–2 जो भी धर्म हैं उन सबने उस परमपिता परमात्मा को ही फॉलो किया।

अब जब परमपिता परमात्मा ने आकर नए सनातन धर्म की स्थापना की तो भी यही प्रक्रिया चली कि ब्रह्मा के शरीर छोड़ने के कुछ समय के बाद उस ब्रह्माकुमारी आश्रम में दो तरह के लोग स्पष्ट नज़र आते हैं। तो आपस में टकराव पैदा होता है। बुद्धिजीवियों की संख्या कम होती जाती है और वे अलग हो जाते हैं। तो संघर्ष तो बढ़ेगा ही। हर धर्म में यह संघर्ष बढ़ते–2 चर्मउत्कर्ष रूप पैदा होता है। गुरुओं का जो बड़ा और पुराना रूढ़िवादी, दकियानूसी वर्ग है वह सच्चाई को नहीं पहचानता; क्योंकि उनको तो गद्दी मिली हुई है। वह माउंट आबू में अभी भी काबिज़, अधिकार–प्राप्त है। वे सच्ची बात को सुनते नहीं हैं। आप देखेंगे कि जो कुछ भी ब्रह्मा द्वारा माउंट आबू से मुरली या वाणी सुनाई है, वह वाणी वास्तव में अपनी जगह पर शास्त्रसंगत है; लेकिन ब्रह्माकुमारियाँ आज भी यह बात कह रही हैं कि शास्त्र सब झूठे हैं और हमारे बाबा ने जो कुछ बोला है वही सच्चा है; लेकिन बाबा ने जो कुछ बोला है उसका अर्थ क्या है? वह उन्हें पता ही नहीं है और सुनने के लिए तैयार भी नहीं हैं। हर धर्म में यह स्थिति पैदा होती रही है। इसी

तरीके से परमपिता परमात्मा शिव राम वाली आत्मा (जो त्रेतायुग में भी होती है), जो जन्म–मरण के चक्र में आते–2 कलियुग–अन्त में साधारण मानव तन में होती है, उसमें प्रवेश करके शंकर के नाम–रूप से संसार में धीरे–2 प्रत्यक्ष होना शुरू होते हैं। शंकर का सख्त पार्ट है। सख्त पार्ट के द्वारा वे ब्राह्मणों के सम्प्रदाय में दो फाड़े कर देते हैं– **सच्चे मुखवंशावली ब्राह्मण और झूठे कुखवंशावली ब्राह्मण।** मुखवंशावली वह जो ब्रह्मा के मुख से चलाई हुई मुरली की ही बात मानते हैं, किसी देहधारी की बात नहीं मानते और कुखवंशावली वह जो ब्रह्मा की कुख अर्थात् गोद के प्यार को विशेष महत्व देते हैं, मुख की चलाई हुई मुरली को महत्व नहीं देते। चुनी हुई कुछ श्रेष्ठ आत्माएँ निकलती हैं। आपने देखा होगा कि शंकर जी के बाहों में माला दिखाते हैं। गले में भी कई तरह की मालाएँ पड़ी हुई हैं। माला संगठन की निशानी होती है। एक, स्नेह और दूसरे, ज्ञान के सूत्र में वे मणके रूपी आत्माएँ पिरोई गई हैं। उनका संगठन तैयार किया गया है। वह माला रूपी संगठन सारे संसार में हर धर्म में मान्यता प्राप्त करता है। किस रूप में? आप देखेंगे, मुसलमानों में भी माला घुमाई जाती है, क्रिश्चियन्स में भी माला घुमाई जाती है, बौद्धी लोग भी माला घुमाते हैं, सिक्ख लोग भी माला घुमाते हैं। यह माला का इतना महत्व क्या है जो हर धर्म में घुमाई जाती है? यह कोई नहीं जानता। बाबा ने मुरली में बताया है कि **"बच्चे, ये माला के जड़ मणके तुम तामसी जड़जड़ीभूत आत्माओं की यादगार है।"** जब परमपिता परमात्मा आते हैं तो तुम आत्मा रूपी मणकों को इकट्ठा करते हैं और श्रेष्ठ आत्माओं का जो माला रूपी संगठन तैयार होता है वह सारे संसार में तहलका/खलबली मचाता है। पहले भारतवर्ष में ब्राह्मणों की दुनिया के अन्दर तहलका/खलबली शुरू होती है।

माला के संगठन में 108 मणके होते हैं। आप देखेंगे, दुनिया में आज मुख्य–मुख्य 9 धर्म फैले हुए हैं। हिन्दू धर्म तो बहुत पुराना है। उसमें से दो फाड़े ऐसे हैं– (एक) जो कभी दूसरे धर्म में कनवर्ट नहीं होते और दूसरे ऐसे हैं कि जो कनवर्ट होते ही रहे। मुसलमान आए तो मुसलमानों में कनवर्ट हो गए, क्रिश्चियन्स आए तो क्रिश्चियन्स में कनवर्ट हो गए, सिक्ख आए तो सिक्ख में कनवर्ट हो गए। तात्पर्य यह है कि सनातन धर्म में दो प्रकार के वर्ग हो गए– एक नॉन कनवर्टेड, जो कभी कनवर्ट नहीं हुए। भले किसी भी तरह की कोई परीक्षा आई; परंतु अपने धर्म को नहीं छोड़ा। दूसरे वह, जो कनवर्ट होते ही रहे, एक से दूसरे धर्म में, दूसरे से तीसरे धर्म में, तीसरे से चौथे धर्म में। आज से 2500 वर्ष पहले 'इस्लाम धर्म' आया, फिर चौथा 'बौद्ध धर्म' आया, (जो) चीन, जापान, बरमा, मलाया में फैला। पाँचवाँ 'क्रिश्चियन धर्म' आया, जो युरोपीय देशों में फैला, अमेरिका में फैल गया। छठा शंकराचार्य का 'सन्यास धर्म' (लाल–पीले–काले–सफेद कपड़े पहनकर निकला)। उसके बाद मुहम्मद आए, जिन्होंने इस्लाम धर्म के फाड़े करके मूर्तिपूजा बंद करवा दी और 'मुस्लिम धर्म' फैलाया। उसके बाद गुरूनानक आए और उन्होंने मुसलमानों से टक्कर लेने के लिए भारत के ही अच्छे–खासे, हट्टे–कट्टे कम बुद्धि वाले, जो सनातन धर्म के लोग थे, उनको कनवर्ट करके 'सिक्ख' बना दिया और वे मुसलमानों से, क्रिश्चियन्स से ज़बर्दस्त टक्कर लेते रहे। कुल मिलाकर अन्त में 'आर्य समाज' एक ऐसा धर्म आता है जो सबको आहूत करता है कि तुम सब आ करके भारतवर्ष में इकट्ठे हो जाओ। किसी भी धर्म का हो हम उसे हिन्दू बना देंगे। पक्के हिन्दुओं ने तो कभी विधर्मियों को स्वीकार नहीं किया। आर्यसमाजियों ने अपने देश में सब धर्मों का कचड़ा इकट्ठा कर लिया। एक धर्म ऐसा है 'नास्तिकवाद', जो माला में नम्बर ही नहीं पाता। ईश्वर की जो श्रेष्ठ आत्माओं वाली 108 की माला बनती है, उसमें उनका नम्बर नहीं लगता। वे ये हैं नास्तिक (रशियन्स)। वे न स्वर्ग मानते हैं, न नर्क मानते हैं; न आत्मा को मानते हैं, न परमात्मा को मानते हैं। वे कुछ नहीं मानते। वे अपने नशे में आकर ऐटमिक एनर्जी तैयार करते हैं कि हम ही सब कुछ हैं। हम चाहेंगे तो दुनिया को नचाएँगे, नहीं तो नष्ट कर देंगे; लेकिन वे अपने मक्कड़ जाल में खुद ही फँस जाते हैं। आज तो रूस बिखर गया और उससे ज़्यादा ऐटमिक एनर्जी अमेरिका ने धारण कर ली है। इस तरीके से दुनिया के नं०वार 9 मुख्य आस्तिक धर्म हैं। इन 9 धर्मों की चुनी हुई मुख्य–2 बारह–2 (9 x 12 = 108) आत्माएँ परमपिता परमात्मा इकट्ठी करते हैं। सारी सृष्टि से चुनकर 12 नेमा 108 मणके तैयार होते हैं।

आज से 70–75 साल पहले भारतवर्ष में इतने भगवान नहीं थे। **आचार्य रजनीश** भी भगवान, **जय गुरुदेव** भी भगवान, **साँई बाबा** भगवान, **सतपालजी महाराज** भगवान, **चंद्रा स्वामीजी** भगवान– ये ढेर के ढेर भगवान 75 साल पहले थे ही नहीं। 70–75 साल के अंदर ही ये ढेर के ढेर भगवान पैदा हो गए। **अब**

भगवान एक होगा या ढेर के ढेर होंगे? भगवान तो ज़रूर एक होगा; लेकिन हिसाब क्या है? जब इस सृष्टि पर परमधाम छोड़कर सच्चा हीरा आता है तो उसकी भेंट में ढेर सारे नकली हीरे दुनिया के बाज़ार में तैयार हो जाते हैं। वे नकली हीरे चारों तरफ अपना पॉम्प एण्ड शो, शोर–शराबा फैला देते हैं। जबलपुर में **महेशयोगी** की एक बड़ी भारी बिल्डिंग बननी थी। सैकड़ों–करोड़ों रुपयों की वह बिल्डिंग तैयार होनी थी। उसमें होना क्या? बस, वही स्वाहा। अब उससे कुछ होता थोड़े ही है। 2500 वर्ष से यह स्वाहा–2 होता चला आया। क्या इससे कोई दुनिया का परिवर्तन होना है? परिवर्तन कुछ भी नहीं होना है। वह एक बात तो सच्ची बता दी कि वातावरण शुद्ध होता है; परन्तु बजाय वातावरण शुद्ध होने के दुनिया और ज़्यादा बिगड़ रही है। (एक भाई ने कहा– अमेरिका से वे गोल्ड का स्मगलिंग करते हैं)। चलो वह कुछ भी हो, हमने एक बात बताई कि भगवान ढेर के ढेर हैं; लेकिन नकली हीरे हैं और उनमें पता नहीं चल रहा है कि असली कौन है? ज़रूर असली भी है; लेकिन पता नहीं चल रहा है और उसका प्रूफ यह है कि भगवान जब आएँगे तो नई सृष्टि की स्थापना के साथ–2 पुरानी सृष्टि का विनाश का सामान भी तैयार कराएँगे। सत् धर्म की स्थापना के साथ–2 ढेर के ढेर जो दुष्ट धर्म फैले हुए हैं उनका भी विनाश का कार्य करते–कराते हैं। **"विनाशाय च दुष्कृताम्।"** (गीता 4/8) गीता का यह श्लोक ही बताता है। परमपिता परमात्मा जब इस सृष्टि पर आते हैं तो यह तैयारी पहले कराते हैं। स्थापना गुप्त करते हैं और विनाश का कार्य प्रत्यक्ष कराते हैं।

रूस और अमेरिका, जिनको अपनी भारतीय परम्परा में महाभारत में यादव कहा गया है। बड़े–2 धनाढ्य होते थे, बहुत शराब पीते थे और ऊँची–2 बिल्डिंगें होती थीं। ऐसे जो यादव ग्रुप हैं उन्होंने क्या किया? वे थे तो यदुवंशी भगवान कृष्ण के कंट्रोल में; लेकिन उन्होंने क्या किया? उनके बुद्धि–रूपी पेट से जो मिसाइल्स निकले, उन मूसलों से उन्होंने आपस में मिलकर–लड़कर अपने सारे कुल का संहार कर दिया और सारी सृष्टि का विनाश कर दिया। लोगों ने स्थूल मूसल समझ लिए। अब यह तो समझने–2 की विडंबना है। वास्तव में है मिसाइल्स की बात। जैसे पेट में कोई चीज़ पचाई जाती है ऐसे यह बुद्धि–रूपी पेट है। कहते हैं ना– 'तुम्हारे पेट में बात नहीं पचती।' तो क्या यह (स्थूल) पेट है या यह (बुद्धि–रूपी) पेट है? इस बुद्धि–रूपी पेट में से वे मिसाइल्स निकले। उन लोहे के मूसलों से यह सारी दुनिया नष्ट होती है। 70–75 साल के अंदर भारी तादाद में यह एनर्जी भी तैयार हो गई, सृष्टि पर परमपिता परमात्मा का अवतरण भी हुआ और 70–75 साल पहले भारतवर्ष में महात्मा गांधी के टाइम पर सबसे ज़्यादा जो आवाज़ लगाई गई थी, **'हे पतित–पावन! आओ'** वह आवाज़ भी लग रही थी। भारत की 40 करोड़ जनता गांधीजी के तत्वावधान में **'रघुपति राघव राजाराम, पतित–पावन सीताराम'** की आवाज़ लगा रही थी; लेकिन आवाज़ लगाने वालों को यह पता नहीं चला कि परमपिता परमात्मा इस सृष्टि पर उस समय से ही आ चुके हैं।

कहने का मतलब यह है कि **जब परमपिता परमात्मा आते हैं तो एक तरफ विनाश की बाजी भी तैयार कर देते हैं और दूसरी तरफ स्थापना का कार्य भी गुप्त में चलाते हैं।** तो इस समय ये दोनों कार्य सम्पन्न हो रहे हैं– स्थापना का कार्य भी पूरा होता है और ऐटमिक एनर्जी भी तैयार हो जाती है, जिसका प्रथम विस्फोट हीरोशिमा–नागासाक़ी में हुआ। तब जा करके इस सृष्टि का एक तरफ विनाश होता है और दूसरी तरफ वह माला तैयार हो जाती है जो सारी सृष्टि की धर्मसत्ता और राज्य–सत्ता की बागडोर धीरे–2 अपने हाथों में ले लेती है। आपने ज्योतिषियों की कुछ भविष्यवाणियाँ सुनी होंगी, जो अक्सर करके निकलती रहती हैं। 400/500 साल पहले के जो ज्योतिषी हुए हैं– कीरो, कीथ और नेस्तरडाम आदि, इनकी भविष्यवाणियाँ निकली हुई हैं। सभी ने 2000 को मुद्दा बनाया; लेकिन 2000 के आस–पास का जो भी मुद्दा था, वह सारी सृष्टि के विनाश का मुद्दा नहीं था। वह वास्तव में सिर्फ ब्राह्मणों की दुनिया के अन्दर आधारमूर्त एवं बीजरूप आत्माओं की दुनिया के विनाश का मुद्दा है। यह कोई नहीं जानता। यह दुनिया एकदम ऐसे चुटकी में ख़त्म हो जाएगी तो परमपिता परमात्मा को कौन पहचानेगा? परमपिता परमात्मा को पहचानने के लिए टाइम तो चाहिए ना।

वास्तव में, यह जो 2000 साल के बाद का पीरियड है, यह ब्रह्माकुमारी आश्रम में आमूल–चूल परिवर्तन ला देगा। बाहर की दुनिया में भी थोड़ा–2 परिवर्तन होगा, ऐटमिक एनर्जी का भी थोड़ा–2 विस्फोट होगा; लेकिन इतना नहीं होगा कि सारी सृष्टि ख़त्म हो जाए। अभी सिर्फ ब्राह्मणों की पुरानी दुनिया का विनाश होता है, नई दुनिया की स्थापना होती है और सब आत्माएँ पहले बुद्धियोग से वापस परमधाम में

जाती हैं। माने ब्राह्मणों की दुनिया के अन्दर जो विशेष आत्माएँ हैं, वे इस बात को समझ लेती हैं कि परमपिता परमात्मा का साकार रूप और कार्यकाल क्या है और यह कार्य कैसे चल रहा है। यहाँ दिखाया गया है कि जैसे हम आत्माएँ ज्योतिर्बिन्दु हैं, वैसे परमपिता परमात्मा भी ज्योतिर्बिन्दु हैं। ज्योतिर्बिन्दु का ही बड़ा आकार शिवलिंग बनाया जाता है, जिसे अपनी भारतीय परम्परा में 12 ज्योतिर्लिंगम् के नाम से प्रसिद्ध किया गया है। **उज्जैन, काशी, रामेश्वरम्, केदारनाथ, बद्रीनाथ...**, ये 12 ज्योतिर्लिंगम् बने हैं। 12 ही क्यों, 13 क्यों नहीं? 11 या 10 क्यों नहीं? 9 धर्मों से चुनी हुई 12–12 आत्माओं के 9 ग्रुप्स होते हैं। हर धर्म में श्रेष्ठ आत्माएँ तो होती हैं ना! परमपिता परमात्मा भी जब आते हैं तो सर्वप्रथम हर धर्म से श्रेष्ठ आत्माओं को चुनते हैं और चुनकर उनको पक्का सूर्यवंशी ब्राह्मण बनाते हैं।

आज की दुनिया में वास्तव में कोई ब्राह्मण नहीं रहा। (भाई ने कहा– आप यह क्या कहते हैं? आप तो ब्राह्मणों की अवहेलना करते हैं)। नहीं, तुलसीदास ने यह बात रामायण में आज से 400–500 वर्ष पहले लिखकर छोड़ी है– **'भये वर्ण संकर सबै'**, सारे ही वर्ण संकर हो गए, कोई ब्राह्मण और कोई शूद्र नहीं रहा। उन्होंने 400 साल पहले लिखा था, अब तो हालत बहुत खराब हो गई। अब तो बहुत ज़्यादा व्यभिचार फैल गया। घर–2 में व्यभिचार फैला हुआ है। तो इस समय परमपिता परमात्मा आकर प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा असली ब्राह्मण कुल की स्थापना कर रहे हैं। आपने सुना होगा, ब्राह्मणों की 9 कुरियाँ गाई जाती हैं– शांडिल्य गोत्र, भारद्वाज गोत्र, कश्यप गोत्र आदि–2। 9 ऋषियों के आधार पर 9 गोत्र गाए जाते हैं। वे 9 ऋषि कोई दूसरे नहीं हैं, 9 धर्मों का प्रतिनिधित्व करने वाली 9 श्रेष्ठ आत्माएँ हैं, जो परमपिता परमात्मा इस सृष्टि से असली ब्राह्मण धर्म में चुनते हैं। जो 9 आत्माएँ हैं उनमें से एक सबसे श्रेष्ठ होगा ना? जो सबसे श्रेष्ठ हुआ, उसके जो 12 के ग्रुप हैं, वे परमपिता परमात्मा शिव से इतना तादात्म्य स्थापित करते हैं कि उनकी शिव जैसी ही स्टेज बन जाती है। इसलिए तो 12 ज्योतिर्लिंगम् आज भी भारतवर्ष में भगवान के रूप में पूजे जाते हैं।

कहने का मतलब यह हुआ कि परमपिता परमात्मा शिव भी ज्योतिर्बिंदु हैं। ऋषियों–महर्षियों ने पूजा के लिए उनका बड़ा आकार बना दिया है। वह निराकारी स्टेज का प्रतीक है। निराकार का मतलब यह है कि उस स्टेज में जो 12 हैं, उनमें से एक **शंकर** का रूप, जिसे **'रुद्र अवतार'** कहा जाता है, वे ऐसी निराकारी स्टेज में रहते हैं कि जैसे कि उनका शरीर रूपी वस्त्र है ही नहीं। नं०वार इस स्टेज में रहना, अपने को सदैव आत्मिक स्टेज में समझना, दूसरों को आत्मा के रूप में देखना– ऐसी प्रैक्टिस पक्की हो जाए, उसको कहेंगे **'निराकारी स्टेज'**। इंद्रियाँ जैसे होते हुए भी नहीं हैं। जैसे कहते हैं– 'देखते हुए भी नहीं देखना, सुनते हुए नहीं सुनना'। **जैसे दुनिया में कितनी भी ग्लानि उड़ रही है, उनके ऊपर कोई असर नहीं पड़ रहा है।**

'बी' साइड

चित्र नं. 4 (**सर्व आत्माओं का पिता एक है**) :–

वह तो गॉड फादर है जिसके अलग–2 नाम–रूप दे दिए हैं; लेकिन अलग–2 नाम–रूप होते हुए भी एक रूप ऐसा है जो हर धर्म में मान्यता प्राप्त करता है। कैसे? अपने भारतवर्ष में ज्योतिर्लिंगम् माने जाते हैं– **रामेश्वरम्** वगैरह। कहते हैं– राम ने भी उपासना की। राम को भगवान मानते हैं; लेकिन उपासना किसकी की? शिव की उपासना की। तो राम भगवान हुए या शिव भगवान हुए? शिव ही हुए। ऐसे ही **गोपेश्वरम्** मंदिर भी बना हुआ है। 'गोप' कृष्ण को कहा जाता है। इससे साबित हो गया कि कृष्ण भगवान नहीं थे। वास्तव में उनका भी कोई ईश्वर है, जिन्होंने उनको ऐसा बनाया। ऐसे ही **केदारनाथ है, बद्रीनाथ है, काशीविश्वनाथ** है और यह **सोमनाथ** है। इन सभी मंदिरों में इस बात की यादगार है कि यहाँ उस निराकार ज्योति को ज्योतिर्लिंगम् के रूप में माना जाता है। नेपाल में **पशुपतिनाथ** का मंदिर है। कलियुग के अंत में सभी मनुष्यमात्र पशुओं जैसा आचरण करने वाले हो जाते हैं। उन पशुओं को भी पशु से, बंदर से मंदिर लायक बनाने वाली वही निराकार शिवज्योति है। उसी की यादगार में एक शिवलिंग नेपाल में भी स्थापित है।

अच्छा, हिन्दुओं की बात छोड़ दीजिए। मुसलमान लोग मक्का में हज़ (तीर्थ यात्रा) करने जाते हैं। वहाँ मुहम्मद ने दीवाल में एक पत्थर लाकर रखा था। उसका नाम उन्होंने **'संग–ए–असवद्'** दिया। अभी भी जब तक मुसलमान लोग उस पत्थर का चुम्बन नहीं कर लेते, सिजदा नहीं माना जाता, उनकी हज़ की यात्रा पूरी नहीं होती। इसका मतलब वे भी आज तक उस निराकार को मानते हैं, हालाँकि वे पत्थर को नहीं मानते। वे तो मूर्तियाँ व शिवलिंग को तोड़ने वाले रहे हैं। उन्होंने यहाँ भारत में आकर शिवलिंगों को तोड़ा है; लेकिन वहाँ मानते हैं। बौद्धी लोग आज भी चीन–जापान में देखे जाते हैं कि वे गोल स्टूल के ऊपर पत्थर की बटिया रखते हैं और उसके ऊपर दृष्टि एकाग्र करते हैं। इससे साबित होता है कि वे भी उस निराकार को मानते हैं। गुरूनानक ने तो कई जगह कहा है– **'एक ओंकार निरंकार', 'सद्गुरू अकाल मूर्त।'** वे तो निराकार को मानते ही हैं। ईसाईयों के धर्मग्रंथ बाईबल में तो कई जगह लिखा हुआ है– **'गॉड इज़ लाइट'** अर्थात् परमात्मा ज्योति है। कहने का मतलब यह है कि हर धर्म में उस निराकार ज्योति की मान्यता है। अब यह सवाल पैदा होता है कि जब सब धर्मों में उस एक ही रूप की मान्यता है, तो सब धर्म वाले उस एक ही को परमपिता परमात्मा का रूप क्यों नहीं मानते? ये अलग–2 रूप क्यों माने हुए हैं? यह वास्तविकता किसी की बुद्धि में नहीं आ रही है।

वह निराकार ज्योति जब इस सृष्टि पर आती है तो जो विशेष आत्माएँ **राम और कृष्ण** हैं, इन दो को चुनकर सृष्टि के विनाश और स्थापना के कार्य में मुखिया बनाती है। कृष्ण की सोल आखरी जन्म में दादा लेखराज के रूप में सिन्ध हैदराबाद में जन्म लेती है और उसमें परमपिता परमात्मा शिव प्रवेश करके पहले प्रत्यक्ष **'ब्रह्मा'** के रूप में कार्य करते हैं, प्यार का पार्ट बजाते हैं। आप कहीं भी, किसी भी ब्रह्माकुमारी आश्रम में जाएँ तो आप कोई भी ब्रह्माकुमार–कुमारी से पूछिए कि बाबा ने कभी किसी को टेढ़ी नज़र से देखा या गलत कुवचन कहा या कोई ऐसा है जिसने बाबा के सम्पर्क में पहुँचने के बाद यह अनुभव किया हो कि ब्रह्मा बाबा ने हमको दुःख दिया? प्रत्येक ब्रह्माकुमार–कुमारी यही कहेगा कि बाबा भले 10 मिनट के लिए मिले हों; परन्तु बाबा ने हमको जितना प्यार दिया उतना दुनिया में हमें किसी से अनुभूति नहीं हुई। वे थे प्यार की प्रतिमूर्ति ब्रह्मा बाबा। जैसे अभी भी टी०वी० में सीरियल आते हैं, आप देखते होंगे कि असुरों ने वरदान ले लिए। हैं असुर; लेकिन फिर भी माँ से वरदान ले लिया। वास्तव में वह एक रूप दिखाया गया है और इनके ठीक विपरीत एक दूसरा रूप रामवाली आत्मा है, जिसमें कलियुग के अंत में परमपिता परमात्मा प्रवेश करके **'शंकर'** के नाम–रूप से प्रख्यात होते हैं। देखो, जैसे इन कृष्ण का नाम–रूप प्रख्यात हुआ है 'ब्रह्मा', वैसे उन राम का नाम–रूप प्रख्यात होता है 'शंकर'। इन दोनों ही शक्तियों की सहयोगी शक्ति दो आत्माएँ भी हैं। कृष्ण की सहयोगी शक्ति है **'राधा'** और राम की सहयोगी शक्ति है **'सीता'**। इनके वर्तमान रूप के नाम पड़ते हैं ब्रह्मा की सहयोगी शक्ति **'सरस्वती'** और शंकर की सहयोगी शक्ति **'पार्वती'**। ये वर्तमान स्वरूप के नाम हैं। जब कलियुगी दुनिया समाप्त होती है, नई सतयुगी सृष्टि रची जाती है, तो चारों आत्माओं के स्वभाव–संस्कार का सम्मिश्रण होता है। अभी तो हर घर में स्त्री–पुरुष के संस्कार आपस में टकराते हैं। कोई घर ऐसा नहीं होगा जिसमें संस्कार टकराए नहीं; लेकिन सबसे पहले एक ऐसी भी दुनिया परमपिता परमात्मा ने बनाई थी कि पहले–2 चार आत्माओं के संस्कार मिलकर एक हो गए थे। वे ये आत्माएँ हैं जो सृष्टि के हीरो–हीरोइन हैं और इन आत्माओं का सम्मिश्रण विष्णु की भुजाओं के रूप में दिखाया गया है। कहते हैं ना, **'मेरे भैया ने शरीर छोड़ दिया, मेरी दाहिनी भुजा टूट गई।'** तो दाहिनी भुजा थोड़े ही टूट गई, बल्कि जो सहयोगी शक्ति है वह चली गई।

इसी तरह **परमपिता परमात्मा के कार्य में दो दाहिनी भुजा के रूप में सहयोगी बनते हैं ब्रह्मा–सरस्वती माने कृष्ण और राधा।** ये कड़ा–कठोर रूप कभी नहीं अपनाते। परिवर्तन के लिए इन्होंने हमेशा प्यार का काम किया; इसलिए इनको परमपिता परमात्मा ने राइट हैण्ड के रूप में स्वीकार किया; लेकिन जब राइट हैण्ड से काम नहीं निकलता तो फिर उँगली टेढ़ी भी की जाती है। वे दो रूप हैं **शंकर और पार्वती**। आदि शक्ति, चामुंडा का रूप धारण करती हैं और शंकर, प्रलयंकर रूप धारण करते हैं। वह राम (शंकर) वाली आत्मा सहयोगिनी शक्ति द्वारा प्रलय मचाती है। शक्ति का रूप धारण किए बगैर रावण, कुम्भकरण, मेघनाद जैसे असुर परिवर्तन नहीं हो सकते। इन ब्राह्मणों के अन्दर ज़्यादा से ज़्यादा तादाद में ऐसे आसुरी तत्व घुस गए, जो रावण, कुम्भकरण, मेघनाद का पार्ट बजाते हैं। उनको सुधारने के

लिए ज्ञान बाण मारने वाली राम की आत्मा तैयार होती है। बाण कोई दूसरे नहीं हैं। परमपिता परमात्मा ने आकर राम के मुख द्वारा उनके लिए जो तीखी बातें बोली हैं, उन बातों का अर्थ ही ज्ञान बाणों का काम करती हैं। हमको तो वे महावाक्य प्यारे लगते हैं; लेकिन उस तरह की जो आसुरी ब्राह्मण आत्माएँ परिवार में घुसी हुई हैं, उनको वे बाण लगते हैं। उनको घाव पैदा कर देते हैं। तो इस तरीके से ये जो लव और लॉ के दो रूप हैं, उनमें यह तीसरा रूप समाया हुआ है जो ब्रह्मा–सरस्वती, शंकर और पार्वती रूपी चार आत्माओं का सम्मिश्रण ही **'विष्णु'** कहा जाता है। बाकी ऐसा कोई व्यक्ति संसार में कभी हुआ नहीं है जो चार भुजाओं का रहा हो या 10 सिर का रावण रहा हो। 10 सिर के रावण का मतलब है कि दसों धर्म मिल करके संसार में प्रजातंत्र राज्य का ऐसा बेकायदे संगठन बनाते हैं, जिससे सारी दुनिया विनाश के कगार पर खड़ी हो जाती है। बाकी परमपिता परमात्मा ने तो आकर राजयोग सिखाकर कायदेसिर दैवी राजाओं का राज्य स्थापन किया था।

परमपिता परमात्मा जो स्कूल खोलते हैं, सद्गुरू कहे जाते हैं, तो ज़रूर वे ऐसी ईश्वरीय यूनिवर्सिटी का वाइस चान्सलर बनते होंगे, जहाँ वे कोई माला रूपी संगठन की बड़ी–2 पदवियाँ देकर जाते हों। देश–विदेश में जन्म–जन्मांतर के जो राजाएँ बने हैं उन राजाओं को राजाई करने की विद्या उन्होंने सिखाई थी। उसको **'राजयोग'** कहा जाता है। वह राजयोग परमपिता परमात्मा गीता ज्ञान के द्वारा अभी सिखा रहे हैं। जन्म–जन्मांतर का राजा बना रहे हैं। लौकिक बाप जो होते हैं वे तो एक जन्म की प्राप्ति कराते हैं, वर्सा देते हैं; लेकिन यह पारलौकिक बाप जब सृष्टि पर आते हैं तो अपने आत्मा रूपी बच्चों को अनेक जन्मों की राजाई देकर जाते हैं। वह अनेक जन्मों की राजाई अभी दी जा रही है। संसार में अभी कुछ ही वर्षों में ऐसी 108 श्रेष्ठ आत्माएँ प्रत्यक्ष होने वाली हैं, जो सारे संसार में तहलका/खलबली मचाएँगी और सारे संसार की धर्म सत्ता व राज्य सत्ता, दोनों की बागडोर अपने हाथ में ले लेंगी। यही 108 श्रेष्ठ आत्माएँ आज भी सभी धर्मों में माला के रूप में स्मरण की जाती हैं।

जब सारी दुनिया माया के पंजे में फँस जाती है तब वे ज्ञानसूर्य परमपिता परमात्मा इस सृष्टि पर आते हैं। माया का पंजा कोई स्त्री नहीं है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अंहकार– ये पाँच विकार मनुष्य के अन्दर भरे हुए हैं। उन पाँचों विकारों में सारी दुनिया जकड़ गई है। आज एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है जो इन पाँचों विकारों की जकड़ से बाहर हो। जब सारी सृष्टि की ऐसी अत्यधिक बदतर हालत हो जाती है तब परमपिता परमात्मा शिव आते हैं, जिसकी यादगार में यह **'महाशिवरात्रि'** मनाई जाती है। इस महाशिवरात्रि में **जब परमपिता परमात्मा शिव आते हैं तो दुनिया में चारों तरफ अनेक धर्म फैले हुए होते हैं।** उन धर्मों में धर्म के नाम पर वितंडावाद ज़्यादा है, ज्ञान कुछ भी नहीं है। ज्ञान के नाम पर अज्ञान–ही–अज्ञान सुनाया जाता है और पैसे व दिखावे को ज़्यादा महत्व दिया जाता है। जो धर्म की स्थापना का कार्य है, धारणा की बातें हैं, वे न के बराबर होती हैं। तब ज्ञानसूर्य परमपिता परमात्मा इस सृष्टि पर आकर उस अज्ञान अंधकार का विच्छेदन करते हैं। इसलिए उसकी यादगार में भारतवर्ष में माघ मास को अर्धरात्रि में महाशिवरात्रि मनाई जाती है। जब आख़िरी मास होता है, सृष्टि का आख़िरी टाइम होता है, कलियुग का अन्त होना होता है तब दुनिया में अज्ञान अंधकार चारों तरफ फैला रहता है। जैसे शक्तिमान सीरियल में आता है– **'अंधेरा कायम रहेगा'**। असुर तो यही चाहते हैं कि अंधेरा कायम रहे, दुनिया अज्ञान में रहे और हम अपना आसुरी काम बनाएँ।

तो ये काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार हैं असुर, जिनका मुखिया है काम विकार। उस **काम विकार को परमपिता परमात्मा आकर सबसे पहले शंकर के चोले के द्वारा भस्म कराते हैं।** हमने समझ लिया कि काम विकार कोई देवता का रूप होगा। उसको **'कामदेव'** नाम दे दिया; लेकिन वास्तव में वह कोई अलग से देवता नहीं होता। यह हमारे अन्दर की ही कुप्रवृत्ति, कमज़ोरी व विकृति है जो उस शंकर देव ने पहले भस्म कर दी। भस्म करने वालों में नम्बरवार होते हैं; लेकिन जो उसको सबसे पहले भस्म कर लेता है, वह बात शंकर के लिए दिखाते हैं। उनका ज्ञान का तीसरा नेत्र खुला और काम विकार भस्म हो गया। वह कोई बाहर का काम विकार थोड़े ही था। यह तो अंदर की चीज़ थी जो उन्होंने भस्म कर दी, नष्ट कर दी। जब मुखिया भस्म होगा तो बाकी ये जो चार चोर–डकैत हैं, वे तो अपने आप ही भाग जाएँगे।

चित्र नं. 5 (**शिव और शंकर**) :–

यहाँ दिखाया गया है कि वास्तव में शिव अलग से परमपिता हैं और शंकर अलग आत्मा हैं। गलती के कारण दोनों को मिलाकर एक कर दिया; लेकिन गलती भी नहीं है, वास्तव में वह हमारी बेसमझी हो गई। यह बेसमझी होने के कारण ही ब्रह्माकुमार–कुमारियाँ भी उस बेसमझी में फँसे हुए हैं। क्या बेसमझी हो गई? कि वे सुप्रीम सोल शिव निराकार ज्योतिर्बिंदु जब इस सृष्टि पर आते हैं तो इस सृष्टि पर आकर किसी जनसाधारण को ज़रूर आप समान बनाएँगे व पढ़ाई पढ़ाएँगे। टीचर का कोई तो स्टूडेंट ऐसा निकलेगा जो उनकी पूरी 100 परसेंट पढ़ाई को धारण कर ले। तो वे निराकार ज्योतिर्बिंदु शिव आकर इस शंकर के स्वरूप द्वारा संसार में प्रत्यक्ष होते हैं और इस तरह दोनों का तादात्म्य हो जाता है। आप देखेंगे, कोई यह नहीं कहता है कि शिव–ब्रह्मा एक है। शिव के साथ ब्रह्मा का नाम क्यों नहीं जुड़ा? शिव के साथ विष्णु का नाम क्यों नहीं जुड़ा? शिव के साथ शंकर का ही नाम क्यों जुड़ता है? इसलिए जुड़ता है कि शंकर, शिव की याद में इतना तल्लीन हो जाते हैं कि उनको अपने में समाहित कर लेते हैं अर्थात् बाप समान बन जाते हैं। तो वह समाहित करने की जो स्थिति है वह **'शिव–शंकर एक है'**& यह स्थिति संसार में प्रसिद्ध होती है। **वास्तव में दोनों आत्माएँ अलग–2 हैं।** ये सुप्रीम सोल शिव जन्म–मरण के चक्र में कभी आते ही नहीं। इसलिए 'शिवलिंग' कहा जाता है, 'शंकर लिंग' नहीं कहा जाता; 'शिवरात्रि' कही जाती है, 'शंकर रात्रि' नहीं कही जाती। शिव ऐसी चीज़ है जो कि पाप और पुण्य से हमेशा परे है, और जो देहधारी हैं वे पाप–पुण्य के अंदर फँसते हैं।

अब आप देखिए, शंकर ध्यान में बैठे हैं। अगर ये खुद ही परमपिता परमात्मा का रूप होते, सुप्रीम सोल होते तो ये किसका ध्यान कर रहे हैं? आप पुराने–2 मंदिरों में जाइए, आप देखेंगे, बीच में मुख्य स्थान पर शिवलिंग है और आस–पास सभी देवताओं के साथ शंकर की भी मूर्ति रखी हुई होती है। इससे क्या साबित हुआ? कि और जितने देवताएँ हैं, उन 33 करोड़ देवताओं के बीच में शंकर देव–देव महादेव तो ज़रूर हैं; लेकिन वे परमपिता परमात्मा नहीं हैं। वे भी उनकी उपासना में सामने बैठे हुए हैं। किसके सामने? शिवलिंग के सामने। तो **निराकार की यादगार लिंग रूप शिव ज्योतिर्बिंदु सुप्रीम सोल है और ये शंकर हीरो पार्टधारी इस सृष्टि–रूपी रंगमंच के नायक हैं।** ज्ञानीजनों द्वारा ज्योतिर्बिंदु शिव को सिर्फ याद किया जा सकता है और भक्तिमार्ग में उनका मुकर्रर रथ शंकर ही निराकारी स्टेज में स्थिर हो जाने कारण बड़े लिंग रूप में पूजा जाता है।

चित्र नं. 6 (**परमपिता परमात्मा सर्वव्यापी नही**) :–

यहाँ यह बताया गया है कि ईश्वर जब सृष्टि पर आएँगे तो ज्ञान का कोई–न–कोई ऐसा नया प्वाइंट ज़रूर बताएँगे जिसमें सारी दुनिया भ्रमित हुई पड़ी हो। ऐसी नई बात ज़रूर सुनाएँगे जिसे सारी दुनिया न जानती हो, बल्कि विपरीत बातें ही जानती हो। वह बात यह है कि जब दुनिया में चारों तरफ भगवान को ढूँढ़ा और कहीं नहीं मिला तो लोगों ने उनके लिए कहना शुरू कर दिया– 'वे तो सर्वव्यापी हैं। जर्रे–2 में भगवान हैं। कण–2 में भगवान हैं। जहाँ देखो वहाँ भगवान हैं।' लेकिन वास्तव में गीता का एक श्लोक ही इस बात के लिए काफी है कि **"तद् धाम परमं मम।"** (कृपया गीता का श्लोक 15/6 देखिए) अर्थात् मैं वहाँ परमधाम का रहने वाला हूँ। दुनिया का सबसे श्रेष्ठ ग्रन्थ गीता है, जिसकी सबसे ज़्यादा टीकाएँ हुई हैं, उसके एक श्लोक में यह बात साबित हो गई है। गीता में ही एक शब्द आया है **'विभु'**। इस शब्द का उन्होंने इतना बड़ा अर्थ कर दिया कि संसार में चारों तरफ यही बात फैली हुई है कि वे सर्वव्यापक हैं। वास्तव में विभु का अर्थ यह है कि वे विशेष रूप से हर मनुष्य आत्मा की बुद्धि में, 'भू' माना याद के रूप में, अपना स्थान बना लेते हैं। उसका उल्टा अर्थ लगाकर उन्होंने परमपिता परमात्मा को सर्वव्यापी कह दिया।

यहाँ बात समझाई गई है कि परमपिता परमात्मा वास्तव में सृष्टि पर सर्वव्यापी नहीं हैं। गीता और रामायण भी इस बात के प्रमाण हैं। गीता व रामायण में लिखा है कि **"जब–जब इस सृष्टि पर अधर्म का बोलबाला होता है तब–तब मैं आता हूँ।"** 'आता हूँ' से साबित ही हो गया कि वे नहीं थे तब तो आए, नहीं

तो उनको आने की क्या दरकार थी! दूसरी बात, अभी–2 आपको गीता का जो श्लोक बताया, वह पक्का साबित कर रहा है कि परमपिता परमात्मा **का धाम, नाम, काम ऊँचे ते ऊँचा है, जिसका गायन भी है– 'ऊँचा तेरा धाम, ऊँचा तेरा नाम, ऊँचा तेरा काम'**। धाम, काम, नाम– तीनों ही जब ऊँचा है तो वे ऊँचा ही बैठेंगे या नीचे बैठेंगे? इस दुनिया का भी जो राजा होता है वह भी ऊँची गद्दी पर बैठता है, तो हमने परमपिता परमात्मा को कण–2 में क्यों मिला दिया? यहाँ चित्र में दिखाया गया है कि ऋषि, मुनि, सन्यासी भाव विभोर होते हैं तो खड़ताले बजाकर कहते हैं– 'हे प्रभु! हमें दर्शन दो'; परंतु जब प्रवचन करते हैं तो कहते हैं– 'परमात्मा सर्वव्यापी है। आत्मा सो परमात्मा। शिवोऽहम्। हम परमात्मा के रूप हैं, हम ही भगवान हैं।' तो यह बात तर्कसंगत साबित नहीं होती। एक बात पर पक्का रहना चाहिए। यह क्या बात हुई, कीर्तन करने लगे तो प्रभुजी! हमें दर्शन दो। अब दर्शन कहाँ से दें? तुम्हारे अंदर जब खुद ही भगवान बैठे हुए हैं। तुम खुद ही भगवान के रूप हो। यहाँ यह दिखाया गया है कि जो प्रवचन सुनने वाले हैं वे जिस समय गुरूजी महाराज का प्रवचन सुनते हैं तब तो भाव विभोर होकर कहते हैं– 'हाँ, परमात्मा सर्वव्यापी है, बहुत अच्छा ज्ञान सुनाया'। घर में पहुँचते ही भाई, भाई की हत्या करने लगे। अब उन्हें भाई–2 के अंदर भगवान नहीं दिखाई दिए? यह विरोधाभास एकदम इतना कैसे पैदा हो गया?

वास्तव में सबके अंदर अपनी–2 भिन्न संस्कारों वाली आत्मा होती है। परमपिता परमात्मा उन सबसे सर्वथा अलग हैं। अपनी भारतीय परम्परा में शंकराचार्य की मैथोलोजी अलग है और माधवाचार्य की मैथोलोजी अलग है। माधवाचार्य की गीता में बताया गया है कि **'आत्मा सब अलग–2 हैं और परमात्मा उनसे अलग।'** जबकि शंकराचार्य की गीता में बताया गया है– 'सर्वं खलु इदं ब्रह्म।' अर्थात् इस दुनिया में जो कुछ भी देखने में आ रहा है वे सब भगवान का रूप हैं। माधवाचार्य ने बताया कि **'हर आत्मा में अलग–2 संस्कार हैं'**, ये आत्माएँ गर्भ में जब शरीर धारण करेंगी तो ये अपना अलग–2 पार्ट ही बजाएँगी। इनका पार्ट दूसरी आत्मा से मिल नहीं सकता। हम हमेशा शास्त्रों में यह मिसाल देते आए हैं कि हम सब आत्माएँ सागर में बुदबुदा हैं। बुदबुदे सब सागर में समा जाते हैं। माने हम उस सागर का अंश हैं। यही कहा ना? लेकिन हम एक बात भूल गए। अगर हम बुदबुदे हैं, हम सागर का अंश हैं, तो सागर में से जो चुल्लू भर पानी हमने ले लिया, उसमें जो खारेपने का गुण होगा वही सागर के पानी में भी होना चाहिए ना? यह पानी हमने पुनः उसमें मिला दिया। दोनों का गुण अभी भी एक ही है; लेकिन हम सबके अंदर ये अलग–2 संस्कार कैसे हैं? यह अलगाव कहाँ से आ गया? और जन्म–जन्मातंर से यह अलगाव चलता चला आ रहा है। दूसरी बात, इसका एक और परिहार/निवारण है– आपने कभी चाहा है कि हमारी आत्मा का जो अस्तित्व है वह हमेशा के लिए ख़त्म हो जाए, कोई चाहता है? अगर हमारी आत्मा उस सुप्रीम सोल शिव में जाकर लीन हो जाए, सागर में चुल्लू भर पानी मिला दिया गया तो उसका अस्तित्व हमेशा के लिए ख़त्म हो जाएगा, फिर शास्त्रों में यह बात कहाँ से आई– **''कल्प–2 लगि प्रभु अवतारा। जब–2 त्रेतायुग होता है तब–2 राम का अवतार होता है।''**

अजर–अमर तो सभी आत्माएँ हैं। वह बात तो ठीक है, वह एक अलग बात। उनका अस्तित्व, उनका संस्कार सब अलग–2 है; लेकिन हर आत्मा का अनेक जन्मों का जो पार्ट है वह उस ज्योतिर्बिन्दु रूपी आत्मा के टेप रिकॉर्डर में भरा हुआ है। इस सृष्टि–रूपी रंगमंच पर जब कोई भी आत्मा उतरेगी तो सतयुग के आदि से लेकर कलियुग के अंत तक वह उतने ही जन्म लेगी जितना पहले चतुर्युगी में लिया था। अगर राम की आत्मा होगी तो हर त्रेतायुग में राम के रूप में ही जन्म लेगी। 'हे कृष्ण नारायण' की आत्मा होगी तो वह हर सतयुग के आदि में नारायण के रूप में ही राज्य करेगी। इस तरह हर जन्म में आत्मा का शरीर रूपी चोला बदलने का पार्ट निश्चित है। हर 5000 वर्ष के बाद वह ज्यों का त्यों पुनरावर्तन होता है।

हर आत्मा सो परमात्मा नहीं है। सुप्रीम सोल शिव हमेशा अलग हैं। अगर वे भी जन्म–मरण के चक्र में आने लगें तो हमको छुड़ाने वाला कोई भी नहीं रहेगा। उस सुप्रीम सोल शिव की तुलना हम आत्माओं से नहीं की जा सकती। कोई आत्मा हीरो–हीरोइन पार्टधारी बन सकती है, विलेन व साधारण आत्मा का पार्ट बजा सकती है; लेकिन सुप्रीम सोल शिव जैसा पार्ट किसी का नहीं है। उनका तो तुरिया पार्ट है। वे बार–2 इस सृष्टि पर आते भी नहीं, जैसा शास्त्र में लिख दिया है– **'सम्भवामि युगे–युगे'** अर्थात् मैं हर युग में आता हूँ। अरे, हर युग में आते तो द्वापर के अंत में जब महाभारत युद्ध कराया, कृष्ण के रूप

में परमपिता परमात्मा आए, तो क्या पापी कलियुग की स्थापना करने के लिए आए थे? उनको हर युग में आने की क्या ज़रूरत है? साधारण बाप होता है, वह भी बच्चों के लिए मकान तब तैयार करता है जब मकान पुराना हो जाता है, उस पुराने मकान से काम नहीं चलता। जब तक काम चल सकता है तब तक मरम्मत कराता रहता है। इस सृष्टि–रूपी मकान की भी यही हालत है। इब्राहीम, बुद्ध, क्राइस्ट, गुरूनानक आदि ये धर्मपिताएँ आकर सृष्टि की जगह–2 मरम्मत करते रहे। किसी ने अरब देश में आकर मरम्मत की, किसी ने युरोपीय देशों में की, किसी ने चीन–जापान में की। नया मकान तो किसी ने नहीं बनाया, नई सृष्टि तो नहीं बनाई। यह मरम्मत कितने दिन चलेगी? कुछ समय तक उन धर्मों का प्रभाव रहता है फिर वह खलास। आख़रीन तो फिर भी उसी सुप्रीम सोल शिव बाप को, जो धर्मपिताओं के भी बाप हैं, बापों के भी बाप हैं, इस सृष्टि पर उतरना ही पड़ता है। वे आकर इस सृष्टि का आमूल–चूल परिवर्तन कर देते हैं। तो वे सर्वव्यापी नहीं हैं। वे तो इस सृष्टि पर मुकर्रर रूप से हीरो पार्टधारी में प्रवेश करके पार्ट बजाते हैं।

आपने **'जीज़स'** वा **'क्राइस्ट'** का नाम सुना? आखिर ये दो नाम क्यों? क्रिश्चियन्स लोग मानते हैं कि वह व्यक्ति, जो पहले ख्यातिप्राप्त नहीं था, उसका नाम **'जीज़स'** था, फिर जब ख्यातिप्राप्त हो गया तब उसका नाम **'क्राइस्ट'** पड़ गया। इसका रहस्य कोई नहीं जानता। यह रहस्य परमपिता परमात्मा शिव आकर बता रहे हैं कि कोई भी नई आत्मा ऊपर से उतरती है तो जिसमें भी प्रवेश करती है उसका नाम बदल देती है। जैसे पहले **'नरेन्द्र'** नाम था, बाद में **'विवेकानन्द'** नाम पड़ गया। आचार्य रजनीश का भी ऐसे ही हुआ है। पहले यह एक साधारण लेक्चरर थे। जब आत्मा ने प्रवेश किया तो **'आचार्य रजनीश'** नाम पड़ गया। तो हर आत्मा जो ऊपर से नीचे उतरती है, वह जिसमें प्रवेश करती है, उसको कनवर्ट करके अपने धर्म में खींच ले जाती है और वह आधारमूर्त, जिसमें प्रवेश किया, वह भारत की ही सनातन धर्म की आत्मा होती है। ऐसे ही दूसरे–2 धर्मों में कनवर्शन या परिवर्तन हुआ। भारतवासियों से ही कनवर्ट होकर दूसरे–2 धर्म पनपे हैं और वृद्धि को पाए हैं।

कहने का मतलब यह हुआ कि उस सुप्रीम सोल शिव की तुलना हम आत्माओं से नहीं हो सकती। हम आत्माओं के मुकाबले वे हमेशा तुरीया हैं। वे तो सुख भी नहीं भोगते तो दुःख भी नहीं भोगते। वे सुख–दुःख से हमेशा ही परे रहने वाले हैं। हाँ, यह बात ज़रूर है कि जब वे इस सृष्टि पर आकर राजयोग सिखाते हैं तो ऐसी पढ़ाई पढ़ाते हैं कि हम आत्माएँ नं०वार पुरुषार्थ अनुसार इस स्टेज को प्राप्त करें कि इस सृष्टि पर रहते हुए भी, दुःख–सुख में रहते हुए भी अपनी ऐसी अवस्था बना लें कि दुःख के समय हम दुःखी न हों और सुख के समय हम बहुत ज़्यादा प्रसन्न न हों। जिसका नाम गीता में **'स्थितप्रज्ञ'** दिया गया है; लेकिन हमारी वह अवस्था हमेशा के लिए नहीं रहेगी; परन्तु उस शिव की हमेशा के लिए रहेगी। वह सुप्रीम सोल है। तो फिर आत्मा–परमात्मा एक कहाँ हुए? परमात्मा सर्वव्यापी कहाँ हुए? सुप्रीम सोल शिव तो हमेशा अलग ही हुए।

शिव की तुलना ऊँच ते ऊँच त्रिदेवों से भी नहीं की जा सकती। इन त्रिदेवों की यादगार में **''झण्डा ऊँचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा। विश्व विजय करके दिखलावे।''**– यह बोलते तो हैं; लेकिन यह नहीं जानते हैं कि वे तीन शरीर रूपी वस्त्र कौन–से हैं, जिन वस्त्रों ने सारे विश्व में तहलका/खलबली मचाई थी, सारे विश्व में विजय करके दिखलाई थी? वास्तव में, वे शरीर रूपी वस्त्र **'ब्रह्मा, विष्णु, शंकर'**& ये तीन ही हैं। उनके संकेतक रंग भी वैसे ही दिखाए गए हैं। ऊपर वाला केसरिया रंग है शंकर– क्रांति का सूचक। बीच वाला सफेद वस्त्र सत्वगुणी विष्णु का सूचक है। नीचे वाला हरा वस्त्र ब्रह्मा का सूचक है। जैसे गाँधीजी कहते रहे– **'रामराज्य आएगा, रामराज्य आएगा'**, बल्कि और ही रावण राज्य आ गया। ऐसे ही ब्रह्मा बाबा हमेशा चिल्लाते रहे– **'रामराज्य लाएँगे, स्वर्ग आएगा, वैकुण्ठ आएगा और स्वर्ग आने ही वाला है।'** अब उस स्वर्ग की जगह ब्रह्माकुमारी आश्रमों में रौरव नर्क बन रहा है।

इसलिए ब्रह्मा की मूर्तियाँ, मंदिर व पूजा नहीं होती; क्योंकि तथाकथित ब्रह्माकुमार–कुमारियों ने ही ब्रह्मा की दाढ़ी की लाज नहीं रखी, जबकि शंकर और विष्णु के मंदिर और मूर्तियाँ बनाकर आज सारे भारतवर्ष में पूजा की जा रही है।

चित्र नं. 7 (**सहज राजयोग**) :–

संसार में अनेक प्रकार के योग प्रसिद्ध हैं; जैसे– भक्तियोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग, हठयोग, राजयोग आदि। किंतु, योग के इन सभी प्रकारों में सहज राजयोग श्रेष्ठातिश्रेष्ठ है। योग का अर्थ है– सम्बंध या मिलन। आजकल योग का तात्पर्य योगासन या हठयोग समझ लिया जाता है; किन्तु योगासन से शारीरिक स्वास्थ्य और कुछ सीमा तक मानसिक स्वास्थ्य मिल सकता है; लेकिन सम्पूर्ण सुख–शांति की प्राप्ति तो केवल राजयोग द्वारा ही हो सकती है।

'**राजयोग**' का अर्थ है **राजाओं का राजा बनाने वाला योग या रहस्य भरा योग**। मनुष्यात्माएँ कई जन्मों से देह–अभिमान के दलदल में फँसकर, विनाशी देहधारियों से योग लगाती आई हैं; किंतु जैसे ताँबे वाले दो तारों को जोड़ने से उसमें बिजली प्रवाहित होती है; परंतु रबड़ चढ़े हुए ताँबे के तारों से बिजली का करंट नहीं लगता उसी प्रकार देह–अभिमानी देहधारियों से सम्बंध रखने पर अविनाशी सुख–शांति की प्राप्ति नहीं हो सकती। **परमपिता परमात्मा शिव तो इसे योग भी नहीं, अपितु सरल शब्द में 'याद' कहते हैं।** याद करना एक स्वाभाविक, सरल एवं निरंतर प्रक्रिया है, जबकि योग से किसी विशेष प्रयास का बोध होता है। जैसे परमपिता परमात्मा शरीर में रहते हुए भी उसके भान से न्यारे हैं अर्थात् विदेही रहते हैं, उसी प्रकार हमें भी स्वयं को अविनाशी आत्मा (न कि प्रकृति के 5 तत्वों से बना देह) समझकर, प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा परमपिता परमात्मा को याद करना है। हमारी दृष्टि में शिव रहना चाहिए, मात्र शव अर्थात् देह नहीं। **अतः भगवान को न तो सिर्फ साकार रूप में, न तो सिर्फ निराकार रूप में; बल्कि भलीभाँति पहचानकर साकार शरीर में प्रविष्ट निराकार को याद करना है, यही है सच्चा राजयोग।**

मन, वचन एवं कर्म की पवित्रता, परमपिता परमात्मा से सच्चा स्नेह, दिव्य गुणों की धारणा, ईश्वरीय ज्ञान, शुद्ध अन्न तथा सच्चे ब्राह्मणों का संग करने पर आत्मा देह–अभिमान द्वारा उत्पन्न पाँच विकारों अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से मुक्ति पाकर अपने मूल स्वरूप अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न स्वरूप में स्थित हो सकती है। प्रभु को याद करने के लिए **अमृतवेला या ब्रह्ममुहूर्त** का समय सबसे श्रेष्ठ है; क्योंकि उस समय वातावरण शांत तथा शुद्ध रहता है और मन भी जाग्रत एवं प्रशांत होता है। राजयोग के नित्य अभ्यास से आत्मा में पवित्रता, शांति, धैर्य, निर्भयता, नम्रता–जैसे गुणों की धारणा होती है, साथ ही **आत्मा को व्यर्थ विचारों के फैलाव को समेटने की शक्ति, सहनशक्ति, समाने की शक्ति, अच्छे–बुरे को परखने की शक्ति, सही निर्णय लेने की शक्ति, समस्याओं का सामना करने की शक्ति, विभिन्न संस्कार वाले मनुष्यों के साथ सहयोग करने की शक्ति तथा विस्तार को संकीर्ण करने की शक्ति** आदि आत्मा की अष्ट शक्तियाँ प्राप्त होती हैं।

राजयोग के निरंतर एवं दृढ़ अभ्यास से आत्मा अपने आदि, मध्य एवं अंत की कहानी को तथा इस विश्व में अपने अद्वितीय अनेक जन्मों के पार्ट को जान सकती है और अपने घर बैठे विश्व की आत्माओं को भी शांति एवं सुख का दान दे सकती है। इस प्रकार, हम **स्व–परिवर्तन के साथ–2 विश्व–परिवर्तन** भी कर सकते हैं।

ब्रह्माकुमारी विद्यालय (ब्र०वि०) और आध्यात्मिक विद्यालय (आ०वि०) की शिक्षाओं में अंतर :–

☼ **ब्रह्माकुमारी विद्यालय** शास्त्रों को मान्यता नहीं देता है।
आध्यात्मिक विद्यालय ईश्वरीय वाणी के आधार पर शास्त्रों को मान्यता देता है।

☼ **ब्र०वि०** कृष्ण उर्फ ब्रह्मा को ही एकमात्र गीता का साकार भगवान मानता है, जबकि मुख से कहता है कि कृष्ण गीता के भगवान नहीं हैं।

आ०वि० निराकारी स्टेज वाले साकार शिव–शंकर को प्रैक्टिकल में गीता का भगवान मानता है, कृष्ण उर्फ ब्रह्मा के साकार रूप दादा लेखराज को गीता का भगवान नहीं मानता।

☼ **ब्र०वि०** ब्रह्मा–विष्णु–शंकर के साकार चित्र तो छपाता है; परंतु सिर्फ ब्रह्मा के प्रैक्टिकल साकार रूप को ही मान्यता देता है, विष्णु और शंकर को इस दुनिया से ही उड़ा देता है। जबकि शास्त्रों व दुनिया में भी ब्रह्मा के मंदिर, मूर्तियाँ और पूजा नहीं दिखाई है। ब्रह्माकुमारी विद्यालय शिव–शंकर को तो अलग–2 कहता है; लेकिन यह नहीं बताता कि शास्त्रों में शिव–शंकर को क्यों मिला दिया? शिव को ब्रह्मा, विष्णु अथवा अन्यान्य 33 करोड़ देवताओं के साथ क्यों नहीं मिलाया और शंकर को ही महादेव क्यों कहा है?

आ०वि० में उपरोक्त प्रश्नों का सटीक जवाब है और तीनों देवताओं के साकार प्रैक्टिकल पार्ट की स्पष्टता भी है।

☼ **ब्र०वि०** सिर्फ ब्रह्मा (ब्रह्म+माँ) बड़ी माँ को ही भगवान का साकार रूप मानता है और अपने को सिर्फ ब्रह्माकुमार–कुमारी कहलाता है।

आ०वि० माँ और बाप (प्रजापिता+ब्रह्मा = एडम और ईव) दोनों को साकार रूप में मानता है और अपने को प्रजापिता ब्रह्माकुमार–कुमारी कहलाता है।

☼ **ब्र०वि०** ज्ञान–योग का विज्ञापन करता है; जैसे– प्रोजेक्टर, प्रदर्शनी, पब्लिक भाषण, कॉन्फ्रेंस, मेले, सम्मेलन, रथयात्रा, मनुष्यकृत साहित्य आदि...।

आ०वि० किसी प्रकार के विज्ञापन में विश्वास नहीं करता।

☼ **ब्र०वि०** सिर्फ मृत्यु के बाद ही मुक्ति–जीवनमुक्ति रूपी ईश्वरीय वर्से को जीवन का लक्ष्य मानता है।

आ०वि० जीवन रहते ही लोक और परलोक सँवारने का पुरुषार्थ कराता है अर्थात् इसी जन्म में नर से नारायण और नारी से लक्ष्मी बनाने का परम प्रसिद्ध गीता वर्णित उपदेश देता है।

☼ **ब्र०वि०** महल, माड़ियाँ, अटारियाँ बनाकर, 36 प्रकार के भोग खाने में और सिर्फ झकाझक श्वेत वस्त्र पहनने में अपने को श्रेष्ठ मानकर चलता है।

आ०वि० रहन, सहन, खान, पान, पहनावे में सादगी को ही श्रेष्ठ मानकर चलता है।

☼ **ब्र०वि०** में चंदा माँगकर व्यक्तिगत वैभव और मान–शान बढ़ाना आम बात है।

आ०वि० किसी प्रकार के चंदा आदि 'माँगने से मरना भला' समझता है।

☼ **ब्र०वि०** सिर्फ कहता है कि हम एक धर्म, एक राज्य, एक कुल, एक मत की स्थापना करेंगे; परंतु चलन में पूरा ही विरोधाभास देखने में आता है।

आ०वि० के सदस्य प्रैक्टिकल में आए हुए एकमात्र ईश्वर की ही श्रेष्ठ मत को मानते हुए, ईश्वरीय धारणाओं, कायदे, कानून को मानने के साथ–2, नम्बरवार अपने–2 पुरुषार्थ अनुसार चलने का प्रयास भी करते हैं।

☼ समर्पित **ब्र०कु०** प्रायः सन्यासियों की तरह मठ–पंथ बनाकर जीवन चलाती हैं।

आ०वि० के समर्पित या गैर समर्पित सभी सदस्य गृहस्थी जीवन यापन करते हैं; क्योंकि गीता के भगवान स्वयं बेहद के गृहस्थ में रहते हुए गृहस्थी पाण्डवों को ही राजयोग सिखाते हैं, सन्यासियों (भीष्म, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य...) को नहीं।

भविष्यवाणी

(यहाँ उन लोगों की भविष्यवाणियों का वर्णन किया गया है जिनकी भविष्यवाणियाँ आज तक सही साबित हुई) :–

कल्कि पुराण :– स्वतंत्रता के बाद भारत में एक ऐसे महापुरुष का उदय होगा जो वैज्ञानिकों का भी वैज्ञानिक होगा। वह आत्मा और परमात्मा के रहस्य को प्रगट करेगा। आत्मज्ञान उसकी देन होगी। उसकी वेश–भूषा साधारण होगी। उसका स्वास्थ्य बालकों जैसा, योद्धाओं की तरह साहसी, अश्विनी कुमारों की तरह वीर युवा व सुन्दर, शास्त्रों का प्रकाण्ड पण्डित व मानवतावादी होगा। उसका पिता ही उसे योग साधना की ओर प्रेरित करेगा। 24 वर्ष की आयु में वह योग की उच्च भूमिका में प्रवेश करेगा।

एण्डरसन(अमेरिका) :– अरब राष्ट्रों सहित मुस्लिम बहुल राज्यों में आपसी क्रांतियाँ और भीषण रक्तपात होंगे। इस बीच भारतवर्ष में जन्मे महापुरुष का प्रभाव व प्रतिष्ठा बढ़ेगी। यह व्यक्ति इतिहास का सर्वश्रेष्ठ मसीहा होगा। वह एक मानवीय संविधान का निर्माण करेगा, जिससे सारे संसार की एक भाषा, एक संघीय राज्य, एक सर्वोच्च न्यायपालिका, एक झण्डे की रूप–रेखा होगी।

ग्रेरार्ड क्राईसे(हॉलैंड) :– भारत देश में एक ऐसे महापुरुष का जन्म हुआ है जो विश्व कल्याण की योजनाएँ बनाएगा।

जूलबर्ण :– संसार के सबसे समर्थ व्यक्ति का अवतरण हो चुका है। वह सारी दुनिया को बदल देगा। उसकी आध्यात्मिक क्रांति सारे विश्व में छा जाएगी। .... एक ओर संघर्ष होंगे, दूसरी ओर एक नई धार्मिक

क्रांति उठ खड़ी होगी जो आत्मा और परमात्मा के नए–2 रहस्य को प्रगट करेगी। ..... वह महापुरुष 1962 से पूर्व जन्म ले चुका है। उसके अनुयायी एक समर्थ संस्था के रूप में प्रगट होंगे और धीरे–2 सारे विश्व में अपना प्रभाव जमा लेंगे। असंभव दिखने वाले कार्य को भी वे लोग उस महापुरुष की कृपा से बड़ी सरलता से संपन्न करेंगे।

प्रोफेसर कीरो :– भारत का अभ्युदय एक सर्वोच्च शक्ति के रूप में हो जाएगा; पर उसके लिए उसे बहुत कठोर संघर्ष करने पड़ेंगे। देखने में यह स्थिति अत्यंत कष्टदायक होगी; पर इस देश में एक फरिश्ता आएगा जो हज़ारों छोटे–2 लोगों को इकट्ठा करके उनमें इतनी आध्यात्मिक शक्ति भर देगा कि वे लोग बड़े–2 बुद्धिजीवियों की मान्यता मिथ्या सिद्ध कर देंगे।

गोपीनाथ शास्त्री :– अवतारी महापुरुष द्वारा जबरदस्त वैचारिक क्रांति होगी जिसके फलस्वरूप शिक्षण पद्धति बदल जाएगी और ऐसी शिक्षा का अविष्कार होगा जो व्यक्ति को जीवन जीने की कला प्रदान करेगी। जबकि वर्तमान शिक्षा प्रणाली केवल पेट भरने तक ही सीमित है। ...... कथित आत्मज्ञानहीन बुद्धिजीवियों से लोगों की घृणा होगी और भूगर्भ विद्या, रसायन शास्त्र, यंत्र विद्या, खनिज धातु, चुम्बक विद्या आदि के नए क्षेत्र की और विज्ञान का विस्तार होगा, जिसका नेतृत्व भारतवर्ष का एक ऐसा धार्मिक संगठन करेगा जिसका मार्गदर्शक स्वयं भगवान होगा। धार्मिक आश्रम जन जागृति के केन्द्र बनकर कार्य करेंगे।

बाप के वर्तमान साकार पार्ट के प्रति प्रूफ एवं प्रमाणः–

➢ बाप कहाँ आते हैं– यह भी नहीं जानते हैं। जब खुद आकर बतावे तब पता पड़े। कहाँ लिखा भी है कि परमात्मा मगधदेश में आता है।(मु.ता.16.8.76)

➢ शास्त्रों में मगध देश लिखा है; परन्तु नॉलेज कहाँ सिखाई ? आबू में कैसे आए! दिलवाड़ा मंदिर भी यहाँ पूरा यादगार है। जिन्होंने भी बनाया, उन्हों की बुद्धि में आया और बैठकर बनवाया। एक्यूरेट मॉडल तो बना न सके। बाप यहाँ ही आकर सर्व की सद्गति करते हैं, मगध देश में नहीं। (मु.ता.15.9.89 पृ.3 म.)

➢ ऐसे बहुत बच्चे हैं, बाप को पूरा पहचानते नहीं हैं। बाप का अदब(सम्मान) नहीं रखते; क्योंकि बाप कहते हैं मैं साधारण रूप में आता हूँ। मैं जो हूँ, जैसा हूँ, विरला कोई उस रूहाब से चलते हैं। यहाँ तो बहुत साधारण है ना। है कितनी बड़ी असामी! ....आगे चल वह भी पहचानेंगे, ऐसे बाबा को हमने फारकती दे दी! तकदीर को लकीर लगा दी। यह पीछे होगा। अभी तो बहुत साधारण है। रथ है गुप्त। ......गुप्त होने कारण पूरा पहचान नहीं सकते हैं। पूरा पहचान लें तो कहें– बाबा, आपके सिवाए दुनिया में है ही क्या! कोई सद्गति कर न सके। (मु.ता.15.11.75 पृ.1 आ.,म.,अं.)

➢ यादव और कौरव पास कितने महल हैं! तुम बच्चों को कुछ भी नहीं। तीन पैर पृथ्वी के भी तुम्हारे नहीं, सब उन्हों का है। यह भी गाया हुआ है– जिनको तीन पैर पृथ्वी के भी नहीं मिलते थे उन्हों की विजय हुई और वह विश्व के मालिक बन गए। पाण्डव शक्तिसेना गुप्त है। शास्त्रों में भी दिखाते हैं जुआ खेलते, पाण्डवों का राज्य था, फिर जुआ में हराया। (मु.10.6.78 पृ.1 म.)

➢ भगवान खुद कहते हैं, मुझे गाली खानी पड़ती है। सबसे जास्ती गाली मैं ही खाता हूँ। भक्तिमार्ग में भी गाली ही देते हैं। 3 पैर पृथ्वी के भी नहीं मिलते हैं, फिर भी कितनी निरहंकारीपने से पार्ट बजा रहे हैं! (मु.6.3.87 पृ.3 अंत)

➢ बेहद का बाप पढ़ाते हैं। ....परन्तु बाप है साधारण तन में। पढ़ाते भी साधारण रीति हैं; इसलिए मनुष्यों को जँचता नहीं है– गॉड फादरली यूनिवर्सिटी फिर ऐसी होगी। बाप कहते हैं, मैं हूँ गरीब निवाज़। गरीबों को ही पढ़ाता हूँ। साहूकार को ताकत नहीं पढ़ने की। उन्हों की बुद्धि में तो महल–माड़ी ही होती है। (मु.ता.23.4.89 पृ.1 अंत)

➢ भगवान एक है, उनको ही मात–पिता कहते हैं। वह आकर एडॉप्ट करते हैं। कितनी गुह्य बातें हैं। यह नया स्कूल है। नया पढ़ाने वाला है।
(मु.ता.25.10.88 पृ.3 आ.)

➢ यह नॉलेज है। यह है नई बातें नई दुनिया के लिए। भगवानुवाच है ना। भगवान भी नया। वाच्य भी है नई। वह कहते हैं कृष्ण भगवानुवाच; तुम कहते हो शिव भगवानुवाच। हरेक की वाच अपनी–2 है, एक न मिले दूसरे से। (मु.ता.15.6.68 पृ.3 आ.)

कवर चित्र नं. 1 (**त्रिमूर्ति**) :–

'शिव' का अर्थ है– **'कल्याणकारी'**। परमपिता परमात्मा का यह नाम इसलिए है कि सृष्टि–चक्र के अंत में जब मनुष्यात्माएँ तथा प्रकृति, पतित एवं तमोप्रधान बन जाती हैं तो परमधाम निवासी परमपिता परमात्मा शिव ज्योतिर्बिन्दु मनुष्य शरीर का आधार लेकर मनुष्यात्माओं और प्रकृति, दोनों को पावन एवं सतोप्रधान बनाते हैं। उनके इस कर्तव्य की यादगार में ही शिवरात्रि अर्थात् परमपिता के शब्दों में शिवजयंती का त्यौहार मनाया जाता है। सुप्रीम सोल शिव किसी पुरुष के बीज से या माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते। वे प्रजापिता द्वारा मनुष्य–सृष्टि–रूपी वृक्ष के चैतन्य बीज हैं और जन्म–मरण तथा कर्मबंधन रहित हैं। अतः वे अपना कर्तव्य करने के लिए किसी साधारण वृद्ध मनुष्य के तन में दिव्य प्रवेश करते हैं। इसे ही **'परमपिता परमात्मा का दिव्य अवतरण'** कहा जाता है; क्योंकि उनका अपना शरीर नहीं होता है। **उनका दिव्य कर्तव्य** तीन चरणों में सम्पन्न होता है– **स्थापना, विनाश और पालना**। इन तीन कर्तव्यों के लिए वे अव्यक्त स्थिति धारण करने वाली तीन साकार देवात्माओं का आधार लेते हैं। वे देवात्माएँ हैं– **ब्रह्मा, शंकर तथा विष्णु**। मनुष्य–सृष्टि–रूपी रंगमंच पर उनके दिव्य अवतरण के बाद कौन–सी तीन आत्माएँ ब्रह्मा, शंकर एवं विष्णु के पात्रों का अभिनय करती हैं, यह जानने के लिए हमें सन् 1936–37 में परमपिता परमात्मा के अवतरण से लेकर अब तक की घटनाओं को जानना ज़रूरी है।

परमपिता परमात्मा का यह कार्य सन् 1936/37 में पाकिस्तान के **सिंध हैदराबाद** शहर से प्रारम्भ हुआ, जब उन्होंने **दादा लेखराज** नामक एक विख्यात हीरों के व्यापारी को विष्णु चतुर्भुज, नर्क की पुरानी दुनिया के विनाश और स्वर्ग की नई दुनिया की स्थापना का साक्षात्कार कराया; किन्तु वे उन दिव्य साक्षात्कारों का अर्थ समझ न पाए। उन्होंने अपने गुरुओं से इसका अर्थ पूछा; किन्तु भगवान की लीला वे देहधारी गुरु लोग क्या समझें? फिर वे (दादा लेखराज) वाराणसी के प्रकाण्ड पण्डितों से इसका समाधान पाने के लिए गए; किंतु उन्हें वहाँ भी निराशा ही हाथ लगी। वहाँ भी उन्हें साक्षात्कार होते रहे जिसकी तस्वीरें वे गंगा के घाटों पर बनी दीवारों पर बनाते रहते थे। जब कोई भी उनकी समस्या का समाधान न कर सका तो उन्हें **कलकत्ता में रहने वाले** अपने **भागीदार (सेवकराम)** की याद आई। उस भागीदार की निष्ठा व ईमानदारी से प्रभावित होकर ही उन्होंने उसे अपनी कलकत्ता स्थित हीरों की दुकान की ज़िम्मेवारी सौंपी थी।

अतः दादा लेखराज कलकत्ता गए; किंतु सीधे उस भागीदार को अपने साक्षात्कारों का वर्णन करने के बजाय उन्होंने अपनी नज़दीकी संबंध की माता (अर्थात् छोटी माता) को सुनाया और उस माता ने दूसरी माता को सुनाया, जो बोलने, सुनने, सुनाने में सिद्धहस्त थी। बाद में जब सुनने–सुनाने में सिद्धहस्त माता ने प्रजापिता (भागीदार) को सुनाया उसी समय ज्योतिबिंदु परमपिता परमात्मा शिव ने उसी माता और प्रजापिता (भागीदार) में साथ–ही–साथ प्रवेश कर लिया और इस प्रकार उस सिद्धहस्त माता द्वारा साक्षात्कारों का वर्णन **सुनने–सुनाने** की प्रक्रिया द्वारा **'भक्तिमार्ग'** की तथा भागीदार द्वारा ज्ञान **समझने–समझाने** की प्रक्रिया द्वारा **'ज्ञानमार्ग'** की नींव पड़ गई।

इस प्रकार चूँकि परमपिता शिव ने सर्वप्रथम उन दोनों माताओं के समक्ष भागीदार में प्रवेश कर विश्व परिवर्तन का कार्य आरम्भ किया, इसलिए वे शिव ज्योतिर्बिन्दु ही भविष्य में ब्रह्मा, शंकर और विष्णु– इन त्रिदेवों द्वारा संसार में त्रिमूर्ति शिव के नाम से प्रसिद्ध होते हैं।

कुछ समय के बाद दादा लेखराज ने भागीदार और नज़दीकी संबंध की माता (छोटी माता) के प्रैक्टिकल पार्ट और अनुभव से अपने वर्तमान जन्म के पार्ट 'ब्रह्मा' के स्वरूप और भविष्य सतयुग में **कृष्ण** के रूप में प्रथम महाराजकुमार के स्वरूप को भी पहचान लिया।

इस घटनाओं के अनुसार परमपिता परमात्मा का कार्यक्षेत्र एवं परिवार पहले सिंध हैदराबाद, फिर कलकत्ता और तत्पश्चात् कराची में स्थानान्तरित हुआ, जहाँ पहले कुछ वर्षों तक सिंध हैदराबाद में भागीदार द्वारा और फिर कराची में माताओं के द्वारा परमपिता ने **ज्ञान और राजयोग** की शिक्षा दी। प्रारम्भ में यह परिवार **'ओम मंडली'** के नाम से जाना जाता था; क्योंकि ओम की ध्वनि लगाते ही सभी ध्यान में

चले जाते थे तथा वैकुण्ठ और कृष्ण का साक्षात्कार करते थे। संयोगवश सन् 1946–47 तक परमपिता परमात्मा के इस अलौकिक परिवार के तीन सदस्यों– भागीदार, आदि माता तथा नज़दीकी संबंध की माता का देहावसान हो गया। तत्पश्चात् परमपिता ने दादा लेखराज के द्वारा विश्व परिवर्तन का कार्य जारी रखा। उस समय मौजूद कन्या–माताओं में एक ओमराधे नामक कन्या भी थी जिन्होंने अपने वर्तमान जन्म के **'सरस्वती'** नामक पार्ट का और भविष्य सतयुग में **राधा** के रूप में प्रथम महाराजकुमारी के स्वरूप का भी निश्चय कर लिया। सन् 1951 में यह परिवार पाकिस्तान से **माउण्ट आबू** (राजस्थान) को स्थानान्तरित हुआ। इसी दौरान ओम मंडली का नाम **ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय** पड़ा और प्रचार–प्रसार आरम्भ किया। ज्योतिर्बिंदु शिव ने दादा लेखराज (उर्फ ब्रह्मा) के शरीर में प्रवेश कर सन् 1951 से 18 जनवरी, 1969 तक जो महावाक्य उच्चारे उन्हें **'ज्ञान मुरली'** कहा जाता है। सन् 1947 से 1965/68 तक **ब्र०कु० ओमराधे** एवं दादा लेखराज ने जगदम्बा और प्रजापिता ब्रह्मा के कार्यवाहक पात्रों का अभिनय किया। 18 जनवरी, 1969 में दादा लेखराज के देहावसान के बाद ब्र०कु० प्रकाशमणि ने इस संस्था की बागडोर सम्भाली और उनके देहावसान के बाद वर्तमान समय उनके स्थान पर दादी जानकी देश–विदेश में फैली इस संस्था की मुख्य संचालिका है। ब्रह्माकुमारी संस्था के सदस्यों ने समझा कि परमपिता शिव का अब कोई साकार माध्यम नहीं रहा और हमें ही स्वर्ग की स्थापना करनी है। मात–पिता के रूप में परमात्म पालना के बिना इस ईश्वरीय परिवार की वही स्थिति हो गई जैसे कि लौकिक दुनिया में मात–पिता के देहावसान पर अनाथ बच्चों की होती है। संस्था के सदस्यों की संख्या में तो उत्तरोत्तर वृद्धि हुई; किन्तु उनकी गुणवत्ता वह नहीं थी जो संस्था के शुरुआत के वर्षों में परमात्म पालना पाने वाले वत्सों की थी।

जिस प्रकार बुरे व्यक्तियों के संग से मनुष्य खराब हो जाता है, उसी प्रकार सदा पावन एवं कल्याणकारी शिव के साकार साथ के बिना पतित आत्माएँ पावन भी नहीं बन सकतीं। अतः दादा लेखराज ब्रह्मा के देहावसान के पश्चात् सृष्टि पर स्वर्ग स्थापन करने के अपने अधूरे कर्तव्य को पूरा करने के लिए परमपिता परमात्मा ने पुनः उन्हीं आत्माओं का आधार लिया जिन्हें आदि (सन् 1936–37) में चुना था। वही भागीदार, आदि माता तथा नज़दीकी संबंध की माता, जिनके द्वारा यह परमात्म कार्य आरम्भ हुआ था और जिनका सन् 1946–47 से पहले देहावसान हो गया था, पुनः अपने अगले जन्म या शरीर में भिन्न नाम–रूप के साथ इस ब्रह्माकुमारी संस्था के सदस्य बनते हैं। भागीदार की आत्मा पुनः **फर्रुखाबाद** जिले की **कायमगंज** तहसील में जन्म लेती है, आदि माता **दिल्ली** में जन्म लेती है और नज़दीकी संबंध की माता **अहमदाबाद** में ब्रह्माकुमारी बनने के बाद अफ्रीका में स्थित ब्रह्माकुमारी सेवाकेन्द्रों की प्रभारी बनती है। (**नोट**– माउण्ट आबू से उच्चारित मुरलियों और अव्यक्त वाणियों के आधार पर ऐसी उपरिवर्णित मान्यता **आध्यात्मिक विद्यालय** के सभी जिज्ञासुओं की है।)

सन् 1969 में वह ब्रह्माकुमारी बहन अहमदाबाद के **पालड़ी सेवाकेन्द्र** में उस फर्रुखाबादी व्यक्ति को ब्रह्माकुमारी संस्था द्वारा प्रतिपादित प्राथमिक (बेसिक) ज्ञान देने के निमित्त बनती है; किन्तु वे उनकी ईश्वरीय ज्ञान सम्बन्धी शंकाओं का समाधान नहीं कर पाती। संस्था के मुख्यालय में रहने वाले वरिष्ठ भाई–बहन भी इसमें विफल रहे और उस बहन ने शंकाओं के समाधान हेतु उन्हें उन सभी ज्ञान मुरलियों की मुद्रित प्रतियाँ दे दीं जो परमपिता शिव ने दादा लेखराज ब्रह्मा के द्वारा उच्चारी थीं।

सन् 1969 से ही परमपिता शिव ने उस फरुर्खाबादी के शरीर में गुप्त रूप से प्रवेश करना प्रारम्भ कर दिया था; किन्तु उसको इसका आभास न था। परमपिता की ज्ञान मुरलियों का गहन अध्ययन करते–2 उनको शिव ज्योतिर्बिन्दु की प्रवेशता होने के कारण न केवल अपनी शंकाओं का समाधान मिला, अपितु ब्रह्मा की वाणी, मुरलियों में छिपे गुह्य रहस्य भी उनकी बुद्धि में स्पष्ट होने लगे। उन्हें सन् 1969 के बाद परमपिता शिव के साकार पात्र, सृष्टि के आदि, मध्य और अंत के रहस्य पर पूरा निश्चय हो गया। इसके बाद उन्होंने सन् 1976 (बाप के प्रत्यक्षता वर्ष) से इस अध्ययन के द्वारा प्राप्त ज्ञान ब्रह्माकुमार–कुमारियों को सुनाना प्रारम्भ किया। न ब्रह्माकुमारी बहनों और न ही संस्था के तथाकथित वरिष्ठ भाई–बहनों ने उनके निष्कर्ष को स्वीकार किया, बल्कि उन्हें उससे रोकने के प्रयास जोर–शोर से शुरू कर दिए; किन्तु परमपिता शिव को तो सृष्टि पर प्रत्यक्ष होना ही था।

दिल्ली में यमुना किनारे के सेवाकेन्द्रों में कुछ ब्रह्माकुमार–कुमारियों को उनके द्वारा दिए गए ज्ञान के आधार पर यह निश्चय हो गया कि यह किसी मनुष्य का सुनाया गया ज्ञान नहीं, अपितु स्वयं परमपिता

शिव (इनके तन) द्वारा सुनाया गया ईश्वरीय ज्ञान है, जिसके द्वारा ही विश्व का परिवर्तन होना है। इस प्रकार परमपिता के मुकर्रर रथ की अलौकिक ब्राह्मणों की दुनिया में सन् 76 से दिल्ली में प्रत्यक्षता प्रारम्भ हुई। इस मुकर्रर रथ के द्वारा दिए गए ईश्वरीय ज्ञान के आधार पर ब्रह्माकुमार–कुमारियाँ यह समझने लगे कि परमपिता शिव ही प्रजापिता (शंकर) का पार्ट बजा रहे हैं, जिन्होंने आदि (सन् 1936–37) में छोटी व बड़ी माता एवं दादा लेखराज की बुद्धि में ज्ञान का बीजारोपण किया था और अब अंत में ब्रह्मा के मुख से निकली मुरलियों की टीचर के रूप में व्याख्या द्वारा फिर से अविनाशी सुख–शांति का वर्सा दे रहे हैं। साथ ही उक्त दिल्ली में जन्मी कन्या, जिन्होंने आदि में माता के रूप में आदि देवी या जगदम्बा या आदि ब्रह्मा का पार्ट बजाया था, अब पुनः **जगदम्बा या ब्रह्मा** (बड़ी माँ) का पार्ट बजा रही हैं। वास्तव में दादा लेखराज ब्रह्मा की आत्मा ही उनमें प्रवेश कर यह पार्ट बजाती है और आदि–अंत में पार्ट बजाने वाली नज़दीकी संबंध की माता, जो पिछले जन्म में सन् 1942–47 के बीच में कुछ समय के लिए परमात्म परिवार की पालना का आधार बनी थी, अब निकट भविष्य में वैष्णवी देवी के रूप में इस एडवांस ज्ञान को सारे विश्व में फैलाने के निमित्त बनेगी तथा प्रजापिता के साथ विनाश के पहले और बाद में भी **वैष्णवी देवी या विष्णु** (अर्थात् लक्ष्मी–नारायण) के रूप में पालना का पार्ट बजाएगी।

इस प्रकार उपर्युक्त तीन आत्माएँ ही आदि में और अब अंत में भी ब्रह्मा, शंकर और विष्णु के रूप में निराकार परमपिता शिव के तीन दिव्य कर्तव्यों– **'नई दुनिया की स्थापना, ब्राह्मणों की पुरानी दुनिया (ब्रह्माकुमारी विद्यालय) का विनाश तथा नई दैवी दुनिया की पालना'** के निमित्त बनती हैं।

सृष्टि–चक्र :–

पुरातन काल से मनुष्य ने अपने जन्म से पूर्व और मृत्यु के पश्चात् की कहानी को जानने का भरसक प्रयास किया है और कई तरह से इसे वर्णित किया है। वास्तव में परमपिता परमात्मा के अनुसार यह मनुष्य सृष्टि–चक्र आत्माओं और प्रकृति का एक अद्भुत नाटक है, जिसकी हर 5000 वर्ष के बाद पुनरावृत्ति होती है। 5000 वर्ष के इस सृष्टि–चक्र में प्रत्येक आत्मा इस सृष्टि–रूपी रंगमंच पर आकर ये शरीर रूपी वस्त्र धारण कर भिन्न–2 भूमिका अदा करती है।

इस सृष्टि–रूपी नाटक को कालक्रमानुसार चार युगों में बाँटा गया है– **सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग**। प्रत्येक युग की आयु 1250 वर्ष की होती है। सतयुग और त्रेतायुग को मिलाकर **'स्वर्ग'** कहा जाता है तथा द्वापरयुग और कलियुग को मिलाकर **'नर्क'** कहा जाता है। स्वर्ग और नर्क इसी सृष्टि पर होते हैं, न कि आकाश या पाताल में। अद्वैतवादी देवताओं के सतयुग और त्रेतायुग में इस सृष्टि पर एक धर्म, एक राज्य, एक भाषा आदि होने तथा देह–अभिमान न होने के कारण सदा सुख, शांति और पवित्रता होती है। सतयुग व त्रेतायुग में **आदि सनातन देवी–देवता धर्म** था, जिसमें हर आत्मा दिव्यगुण सम्पन्न होने के कारण **देवी–देवता** कहलाती थी। सतयुग का **पहला महाराजकुमार श्री कृष्ण और पहली महाराजकुमारी श्री राधे** थी, जो बड़े होकर **श्री लक्ष्मी व श्री नारायण** के रूप में राज्य करते हैं, जिनकी 8 गद्दियाँ चलती हैं। उसके बाद त्रेतायुग में **श्री सीता व श्री राम** का राज्य होता है, जिनकी 12 गद्दियाँ चलती हैं; किंतु स्वर्ग में कृष्ण के साथ कंस या राम के साथ रावण नहीं होता। द्वापरयुग से देवता धर्म की रजोगुणी अवस्था प्रारम्भ हो जाती है। देव आत्माएँ देह–अभिमान में आकर विकारी एवं दुःखी बन जाती हैं और इसीलिए भगवान को पुकारना आरम्भ करती हैं। देव आत्माएँ (जो अब हिन्दू कहलाती हैं) शिवलिंग तथा अन्य देवताओं की पूजा प्रारम्भ कर देती हैं। चूँकि वे उसी समय अचानक सम्पूर्ण पतित तथा दुःखी नहीं बनती हैं, इसलिए परमपिता परमात्मा स्वयं उन्हें पावन बनाने नहीं आते हैं; अपितु उनके स्थान पर कुछ शक्तिशाली आत्माएँ आती हैं, जो यथाशक्ति सृष्टि पर शांति स्थापन करती हैं; किंतु पूरी तरह सफल नहीं होतीं। सर्वप्रथम (अर्थात् आज से 2500 वर्ष पूर्व) **इब्राहीम** की आत्मा आकर **इस्लाम धर्म** की स्थापना करती है। इसके 250 वर्ष के पश्चात् **बुद्ध** की आत्मा **बौद्ध धर्म** की स्थापना करती है। इसके 250 वर्ष पश्चात् (अर्थात् आज से 2000 वर्ष पहले) **ईसा मसीह** की आत्मा आकर **ईसाई धर्म** की स्थापना करती है।

उपर्युक्त तीन द्वैतवादी धर्म द्वापरयुग में ही स्थापन होते हैं; किंतु इन चार प्रमुख धर्मों से ही कलियुग में अनेकानेक धर्म, मठ, पंथ आदि का प्रचार–प्रसार हो जाता है; जैसे **सन्यास धर्म, मुस्लिम धर्म,**

सिक्ख धर्म, आर्य समाज, नास्तिकवाद आदि। कलियुग आते–2 देवता धर्म (जो हिन्दू धर्म कहलाता है) की तमोप्रधान अवस्था हो जाती है। इसी प्रकार हर धर्म की प्रत्येक आत्मा भी सृष्टि पर जन्म से लेकर कलियुग अन्त तक सतोप्रधान, सतोसामान्य, रजो और तमोप्रधान अवस्था से गुजरती है। जब कलियुग अंत में इस सृष्टि की सभी आत्माएँ धर्म भ्रष्ट और कर्म भ्रष्ट बन जाती हैं तब सभी धर्मपिताओं के भी पिता, स्वयं परमपिता परमात्मा शिव का दिव्य अवतरण होता है, जिसका वर्णन 'त्रिमूर्ति' के पाठ में किया गया है। उनके अवतरण काल, सतयुग–आदि और कलियुग–अंत, को **'संगमयुग'** कहा जाता है, जब परमपिता शिव हम आत्माओं को उत्तम–से–उत्तम देवी–देवता बनाने के लिए ज्ञान और राजयोग की शिक्षा प्रदान करते हैं तथा मुक्ति और जीवनमुक्ति का ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार देते हैं। बाकी युगों के संक्रमण काल को भी संगम कह सकते हैं; किन्तु वहाँ आत्माओं की गिरती कला होती है और सिर्फ कलियुग तथा सतयुग के संगम पर ही आत्माओं की चढ़ती कला होती है, इसलिए इसे **'पुरुषोत्तम संगमयुग'** कहा जाता है। भारत के प्राचीन धर्म शास्त्रों में चार युगों का तो वर्णन है; किन्तु पुरुषोत्तम संगमयुग का उल्लेख नहीं है। यदि सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग की तुलना स्वर्ण, रजत, ताम्र तथा लौह से करें तो संगमयुग हीरे समान श्रेष्ठ युग है; क्योंकि इस युग में स्वयं परमपिता परमात्मा सृष्टि पर अवतरित होकर आत्माओं को कौड़ी से हीरा बनाते हैं। इसके लिए वे सर्वप्रथम प्रजापिता ब्रह्मा में प्रवेश होकर आदि पिता एवं आदि माता को प्रत्यक्ष करते हैं (जैसा कि पहले के अध्यायों में बताया गया है) और उनके मुख से ज्ञान सुनाकर ब्रह्माकुमार–कुमारियों को प्रजापिता ब्रह्मा मुखवंशावली ब्राह्मण भी बनाया जाता है, जो ज्ञान और राजयोग के अभ्यास से **'ब्राह्मण सो देवता'** बनते हैं।

इस संगमयुग की एक विशेषता यह है कि इसमें पूरे 5000 वर्ष की शूटिंग या रिहर्सल होती है। यह शूटिंग या रिहर्सल का कार्य सन् 1936–37 से सुप्रीम सोल शिव के अवतरण के पश्चात् लगभग 100 वर्ष चलता है। जिस प्रकार 5000 वर्ष के ड्रामा में आत्माएँ सतोप्रधान, सतोसामान्य, रजो और तमोप्रधान अवस्था से गुजरती हैं, उसी प्रकार परमपिता सन् 1936–37 से जिस अलौकिक ब्राह्मण परिवार की रचना करते हैं और जिनकी अवस्था को सतोप्रधान बनाते हैं, वही लगभग 80 वर्षों में सतोप्रधान से सतोसामान्य, सतोसामान्य से रजोप्रधान और रजो से तमोप्रधान अवस्था तक पहुँच जाता है। इस प्रकार संगमयुग के मध्यांत तक अर्थात् सन् 2000 से 2003–04 तक परमपिता परमात्मा शिव द्वारा रचे गए ब्राह्मण परिवार में ज्ञानयुक्त संकल्पों के आधार पर चतुर्युगी की शूटिंग होती है। इस शूटिंग में डायरैक्ट परमपिता परमात्मा के प्रति और उनके ज्ञान के प्रति नं०वार सभी ब्राह्मणों को संशय आने लगता है। देह–अभिमान बढ़ जाने के कारण दिव्य गुणों की धारणा के स्थान पर अवगुणों का ऐसा राज्य स्थापित हो जाता है कि निराकार शिव के साकार रथ को ही पतित, विकारी और भ्रष्टाचारी सिद्ध करने का प्रयास किया जाने लगता है; परन्तु अंत में पुनः परमपिता परमात्मा के दिव्य ज्ञान और राजयोग के द्वारा परमपिता शिव की तथा जगदम्बा–जगतपिता की प्रत्यक्षता होती है तथा सम्पूर्ण ब्राह्मणों की दुनिया एक सूत्र में बँध जाती है।

इस प्रकार संगमयुग में ही सतयुग, त्रेता, द्वापर तथा कलियुग की नींव पड़ती है। जनसंख्या की दृष्टि से भी पूरे 5000 वर्ष के नाटक में आत्माओं के पृथ्वी पर अवतरण अथवा ज्ञान में आने की नींव भी संगमयुग में ही पड़ती है। संगम पर ईश्वर का संदेश जिस–2 आत्मा को जितना शीघ्र प्राप्त होता है वह 5000 वर्ष के ड्रामा में भी परमधाम से उतना ही शीघ्र आकर पहले–2 सुख, फिर अपने–2 कर्मानुसार दुःख भोगती है। जैसे सन् 1990 में त्रेतायुगी शूटिंग ख़त्म होने तक लगभग 10 करोड़ देव आत्माओं को संदेश मिल चुका था। अर्थात् उतनी आत्माएँ 5000 वर्ष के ड्रामा में त्रेतायुग के अंत तक पृथ्वी पर जन्म ले लेती हैं।

जनसाधारण यह समझते हैं कि इस ब्रह्माकुमारी आश्रम का ज्ञान शास्त्रों से मेल नहीं खाता; किन्तु ऐसा नहीं है। केवल मुरलियों के गुह्यार्थ को समझने की आवश्यकता है। जैसे शास्त्रों में सतयुग की आयु, त्रेतायुग से अधिक और त्रेता की आयु, द्वापरयुग से अधिक बताई जाती है। इस संदर्भ में वैसे तो 5000 वर्ष के विशाल ड्रामा में हर युग की आयु समान अर्थात् 1250 वर्ष है; किन्तु संगमयुग में इन युगों की शूटिंग के दौरान हर युग की शूटिंग की अवधि अलग–2 होती है। जैसे संगमयुग में वास्तविक सतयुगी शूटिंग में 16 वर्ष की अवधि, त्रेता की शूटिंग में 12 वर्ष की अवधि से अधिक है और त्रेता की शूटिंग की अवधि, 8 वर्ष की द्वापरयुगी शूटिंग की अवधि से अधिक है। इसी प्रकार गीता जैसे शास्त्रों में

हर युग में भगवान के अवतरित होने की जो बात कही गई है वह वास्तव में संगमयुग में ही चार युगों की शूटिंग के अंत में उनके प्रत्यक्षता रूपी जन्म का यादगार है। 5000 वर्ष के ड्रामा में तो शिव भगवान हर युग में अवतार नहीं लेते; किन्तु संगमयुग में हर युग की शूटिंग के दौरान वे प्रत्यक्ष और गुप्त होते रहते हैं। इस प्रकार शास्त्रों की हर बात परमपिता शिव के ब्रह्मा द्वारा संगमयुग पर उच्चारे गए महावाक्यों से मेल ज़रूर रखती है।

उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि मनुष्य सृष्टि का चक्र कैसे फिरता है और किस प्रकार चारों युगों की नींव संगमयुग में ही पड़ती है।

कवर चित्र नं. 2 (**लक्ष्मी–नारायण**) :–

आज के समस्याओं भरे युग में मनुष्य को अपने जीवन के लक्ष्य का पता नहीं है। वैज्ञानिक आविष्कारों के चलते मनुष्य ने कल्पनातीत प्रगति की है; लेकिन फिर भी वह सन्तुष्ट नहीं है। आधुनिक शिक्षा मानव को डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, वैज्ञानिक, नेता या व्यापारी तो बना देती है; किन्तु उसे सच्ची एवं स्थायी सुख–शान्ति की प्राप्ति नहीं करा सकती। अल्पकालिक सुख–शान्ति पाने की जल्दबाज़ी में मनुष्य या तो विषय विकारों में फँस जाता है या फिर भौतिक सुखों से विरक्त होकर सन्यासी बन जाता है; किन्तु सच्ची सुख–शान्ति, न तो विषय विकारों से और न ही सन्यास से प्राप्त होती है। वह तो केवल गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए, ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है। इसी सच्ची सुख–शांति एवं पवित्रता से परिपूर्ण जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री लक्ष्मी और श्री नारायण एवं उनकी दिव्य रचना को ही इस चित्र में चित्रित किया गया है। दादा लेखराज ब्रह्मा द्वारा दिव्य साक्षात्कारों के आधार पर बनवाए गए चार मुख्य चित्रों में यह लक्ष्मी–नारायण का चित्र भी शामिल है। इस चित्र में वर्तमान मनुष्य–जीवन के लक्ष्य अर्थात् **'नर से नारायण और नारी से लक्ष्मी'** को चित्रित किया गया है।

चित्र के ऊपरी भाग में ज्योतिर्बिन्दु रचयिता शिव एवं उनकी सूक्ष्म रचना ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर को दर्शाया गया है, जिनके बारे में इस पुस्तक में बता दिया गया है कि ये तीनों ही स्वर्ग की स्थापना, पालना एवं पुरानी दुनिया के विनाश अर्थात् परमपिता परमात्मा के तीन दिव्य कर्तव्यों के निमित्त बनते हैं। जबकि त्रिमूर्ति के नीचे संगमयुग में लक्ष्मी–नारायण के रूप में प्रत्यक्ष होने वाली आत्माओं और सतयुग में उनके दैवी सन्तान के रूप में जन्म लेने वाले श्री राधे और श्री कृष्ण को चित्रित किया गया है। चित्र के शीर्षक में **'स्वर्ग के रचयिता'** से अभिप्राय लक्ष्मी–नारायण है, न कि शिव; क्योंकि संगमयुग पर ज्योतिर्बिन्दु शिव से तो केवल ज्ञान का निराकारी वर्सा मिलता है। संगमयुग में परमपिता परमात्मा के ज्ञान को सर्वाधिक धारण करने वाली दो सर्वश्रेष्ठ आत्माएँ श्री लक्ष्मी एवं श्री नारायण के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं तथा विनाश के बाद जब सतयुग का आरम्भ होता है तब उनके द्वारा दादा लेखराज ब्रह्मा एवं ओमराधे सरस्वती की आत्माएँ ही श्री कृष्ण एवं श्री राधे के रूप में जन्म लेती हैं।

चित्र के मध्य भाग में लिखा गया है कि **'सतयुगी दैवी स्वराज्य आपका ईश्वरीय जन्म सिद्ध अधिकार है।'** अर्थात् जिस प्रकार विश्व के मात–पिता संगमयुग पर परमपिता शिव का दिया गया ज्ञान धारण कर नर से नारायण और नारी से लक्ष्मी बनते हैं उसी प्रकार हर मनुष्य यह ज्ञान धारण कर इसी जन्म में देवी–देवता बन सकते हैं; लेकिन इस जन्म में देवी–देवता बनने का यह अर्थ नहीं कि हम चित्र में दर्शाए गए लक्ष्मी–नारायण की भाँति आभूषण और वस्त्रादि प्राप्त कर लेंगे। यह आभूषणादि वास्तव में दिव्यगुणों के प्रतीक हैं। चित्र में संगमयुगी लक्ष्मी–नारायण के चारों ओर जो प्रकाश दिखाया गया है वह वास्तव में ईश्वरीय ज्ञान एवं पवित्रता की लाइट है; किन्तु सतयुग में इनके द्वारा जो आत्माएँ राधे–कृष्ण के रूप में जन्म लेंगी उनके केवल सिर के पीछे लाइट का ताज दिखाया गया है जो कि पवित्रता का सूचक है; क्योंकि विनाश के बाद परमपिता परमात्मा का दिया गया सृष्टि के आदि, मध्य और अंत का ज्ञान प्रायःलोप हो जाता है।

यहाँ एक और बात विचारणीय है कि चित्र में दर्शाए गए संगमयुगी लक्ष्मी–नारायण विश्व महारानी व विश्व महाराजन होंगे; क्योंकि अंततः सारे विश्वधर्मों की आत्माएँ उनको अपना मात–पिता मान लेंगी; किन्तु विनाश के बाद मनुष्यों का संसार केवल भारत तक सीमित रह जाएगा; क्योंकि अन्य सभी

धर्मखण्ड 2500 वर्षों के लिए समुद्र में समा जाएँगे। विनाश के बाद सतयुग में लक्ष्मी–नारायण के सन्तान के रूप में जन्म लेने वाले राधे–कृष्ण केवल भारत के 9 लाख देवी–देवताओं के लिए महाराजकुमार व महाराजकुमारी बनेंगे, सारे विश्व के लिए नहीं। हालाँकि यही राधे–कृष्ण बड़े होने पर लक्ष्मी–नारायण का टाइटल (उपाधि) धारण करेंगे; परंतु वे विश्व महाराजा या विश्व महारानी नहीं कहला सकते; क्योंकि विनाश के बाद विश्व की अधिकतर आत्माएँ परमधाम लौट चुकी होंगी। अतः संगमयुगी लक्ष्मी–नारायण ही सच्चे लक्ष्मी–नारायण हैं। इन्हीं सत्यनारायण की कथा आज भी भारत के हर घर में सुनी जाती है, जो झूठी दुनिया के झूठे ज्ञान की बातों से मुकाबला करते हैं।

सतयुग में हर मनुष्य देवी–देवता कहलाएगा तथा सर्वगुण सम्पन्न, 16 कला सम्पूर्ण, सम्पूर्ण निर्विकारी, मर्यादा पुरुषोत्तम एवं डबल अहिंसक होगा। जैसा कि चित्र में स्पष्ट है, वहाँ प्रकृति ही हर प्रकार से अपने स्वामी अर्थात् देवी–देवताओं की सेवा करेगी। वहाँ सदैव सदाबहार मौसम होगा। न हिंसक जीव–जन्तुओं का डर होगा, न ही हिंसक मनुष्य का। आत्मा और शरीर, दोनों ही पवित्र, सुन्दर और निरोगी होने के कारण न वहाँ डॉक्टरों की ज़रूरत होगी, न शरीर रूपी वस्त्र को सजाने के लिए किसी बाह्य साधनों की। चित्र में दिखाया गया है कि कृष्ण की दृष्टि राधे पर है और राधे की दृष्टि कृष्ण पर है। यह वास्तव में सतयुग और त्रेतायुग में देवी–देवताओं के बीच अखण्ड एवं अव्यभिचारी प्रेम का प्रतीक है। वर्तमान कलियुगी वातावरण के विपरीत स्वर्ग में अव्यभिचारी प्यार होता है, अनेक देहधारियों से सम्बन्ध नहीं होता। इसकी नींव संगमयुग पर ही पड़ती है, जब देवी–देवता बनने वाली आत्माएँ, ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त करने के बाद, परमपिता से अव्यभिचारी सम्बन्ध जोड़ती हैं। इस चित्र के मध्य में 'ईश्वरीय जन्म सिद्ध अधिकार' की बात कही गई है अर्थात् परमपिता शिव संगमयुग पर इसी जन्म में हमें देवी–देवता बनाते हैं अर्थात् आत्मा और शरीर दोनों को ही पवित्र बनाते हैं। निकट भविष्य में, इस कलियुगी सृष्टि के विनाश से पूर्व ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग से आत्माएँ तो पवित्र बनेंगी ही; लेकिन विनाश के बाद देवी–देवता बनने वाले जो मनुष्य बचेंगे उनके शरीर भी उसी प्रकार कंचन काया वाले बन जाएँगे जिस प्रकार सर्प एक खाल छोड़ कर दूसरी खाल धारण करता है।

अतः अब जबकि संगमयुग के हीरे तुल्य समय में परमपिता शिव प्रजापिता ब्रह्मा के माध्यम से ईश्वरीय ज्ञान एवं राजयोग की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं तो हमारा कर्तव्य है कि हम भी घर–गृहस्थ में रहते हुए 'नर से नारायण और नारी से लक्ष्मी' बनने का पुरुषार्थ करें।

कवर चित्र नं. 3 (**कल्पवृक्ष**) :–

सृष्टि–रूपी कल्पवृक्ष एक अनोखा वृक्ष है; क्योंकि अन्य वृक्ष की भाँति इस वृक्ष का बीज नीचे नहीं; बल्कि ऊपर की ओर है। प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा मनुष्य–सृष्टि–रूपी वृक्ष के अविनाशी और चैतन्य बीज और कोई नहीं, स्वयं परमपिता परमात्मा शिव ही हैं, जो परमधामी स्टेज में रहते हैं और उनकी रचना नीचे की ओर है। निराकारी आत्माओं का बाप परमपिता शिव, साकारी मनुष्यों का बाप प्रजापिता ब्रह्मा के मुख कमल द्वारा कहते हैं कि **"मैं इस सृष्टि–रूपी कल्पवृक्ष का अविनाशी बीजरूप हूँ और जैसे सामान्य बीज में वृक्ष का सार समाया होता है उसी प्रकार मुझमें इस सृष्टि–रूपी वृक्ष के आदि, मध्य और अंत का ज्ञान है। जब यह वृक्ष जर्जरीभूत हो जाता है तो मैं ही आकर सत्य ज्ञान एवं राजयोग द्वारा फिर नए सिरे से इसका बीजारोपण करता हूँ या सैपलिंग लगाता हूँ।"**

चित्र में इस उल्टे वृक्ष को मात्र समझने के लिए सीधे रूप में दिखाया गया है। इसमें सबसे नीचे कलियुग के अंत और सतयुग के आरम्भ का संगम दिखाया गया है। कलियुग अंत में जब यह वृक्ष जर्जरीभूत हो जाता है तो स्वयं परमपिता शिव, जो इसके बीजरूप हैं, वे **आदि सनातन देवी–देवता धर्म** की सैपलिंग लगाने के लिए प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रवेश कर उनके मुख कमल से सृष्टि के आदि, मध्य और अंत का गीता ज्ञान और राजयोग की शिक्षा देते हैं। इस ज्ञान से जगदम्बा और मुखवंशावली पवित्र ब्राह्मणों की रचना होती है, जिन्हें **'प्रजापिता ब्रह्माकुमार–ब्रह्माकुमारियाँ या शिवशक्ति पांडव'** भी कहते हैं। कल्प के

अंत में शिव भगवान के इस अवतरण समय को ही **'संगमयुग या गीता युग'** कहते हैं। संगमयुग के बाद सतयुग और उसके पश्चात् त्रेतायुग का आरम्भ होता है, जिसको भारत के इतिहास का स्वर्णयुग और रजतयुग कहा जा सकता है; क्योंकि प्रत्येक मनुष्य देवी–देवता होता है। जैसा कि सृष्टि–चक्र के अध्याय में बताया गया है कि सतयुग में सूर्यवंशी लक्ष्मी–नारायण एवं उनके वंशजों का तथा त्रेतायुग में चंद्रवंशी सीता–राम एवं उनके वंशजों का अटल, अखंड, निर्विघ्न, सुख–शांतिमय राज्य चलता है। वहाँ केवल एक आदि सनातन देवी–देवता धर्म होता है, जो कि किसी प्रकार के बाह्य आडम्बरों से रहित, दिव्य गुण सम्पन्न जीवन जीने का एक मार्ग था। आज की परिस्थिति के विपरीत वहाँ धर्म और राज्य का अलग–2 अस्तित्व नहीं था। दोनों सत्ताएँ (धर्म सत्ता और राज्य सत्ता) लक्ष्मी–नारायण और सीता–राम के हाथों में ही थीं; इसलिए न वहाँ मंत्री की आवश्यकता थी, न राजगुरू की, न न्यायाधीश की और न सेनापति की। न वहाँ डॉक्टर थे और न वकील; क्योंकि वहाँ विकारों का नाम–निशान नहीं था। स्वर्ग में केवल एक राज्य, एक धर्म, एक मत, एक भाषा और एक कुल था और यह स्वर्ग केवल भारत में ही था या दूसरे शब्दों में, भारत ही विश्व था; क्योंकि अन्य भूखंड समुद्र में समाए हुए थे। उस भारत को ही **वैकुण्ठ, बहिश्त या हैविन** कहा जाता है। **कल्पवृक्ष की इस अवधि को उसकी आदि कहा जा सकता है।**

इसके पश्चात् जब आत्माभिमानी देवताएँ देहभान में आकर वाममार्ग की ओर प्रस्थान करते हैं अर्थात् विकारी बन जाते हैं तब **द्वापरयुग या कल्पवृक्ष का मध्य भाग आरम्भ होता है।** देवताएँ कर्मभ्रष्ट और धर्मभ्रष्ट हो जाते हैं। देवी–देवता धर्म के रचयिता को भूले हुए ये भारतवासी **'हिंदू'** कहलाने लगते हैं। ऐसे समय पर परमधाम से एक धर्मपिता, **इब्राहीम** की आत्मा किसी भारतीय मनुष्य में प्रवेश कर **इस्लाम धर्म** की स्थापना करती है; किंतु पवित्रता को मान्यता न देने के कारण इस धर्म के अनुयायियों को पश्चिम की ओर पलायन करना पड़ता है, जहाँ द्वापरयुग के प्रारम्भ के साथ ही इस्लामी धर्मखंड, अरब देश समुद्र से ऊपर आ चुका होता है। इब्राहीम के बाद कई धर्मगुरू (प्रोफेट) हुए, जिनमें से एक **ईसा मसीह** (जीज़स क्राइस्ट) ने आज से 2000 वर्ष पूर्व **ईसाई (क्रिश्चियन)** धर्म की स्थापना की। वास्तव में क्राइस्ट की आत्मा भी इब्राहीम की भाँति परमधाम से आकर किसी मनुष्य (जीज़स) में प्रवेश कर अपने धर्म की स्थापना करती है। यह धर्म यूरोप में विकसित होता है, जिसे क्रिश्चियन धर्म खंड कह सकते हैं। इधर भारत में द्वापरयुग के प्रारम्भिक 250 वर्ष के बाद परमधाम से **महात्मा बुद्ध** की आत्मा आकर **सिद्धार्थ** नामक राजकुमार में प्रवेश कर **बौद्ध धर्म** की स्थापना करती है। हालाँकि यह धर्म प्रारम्भ में भारत में विकसित होता है; किंतु जल्द ही यहाँ उसका पतन हो जाता है और इसका विकास भारत के उत्तरपूर्व में स्थित देशों में होता है, जिसे चीन–जापानादि बौद्धी धर्मखंड कह सकते हैं। द्वापरयुग के अंतिम भाग में अर्थात् ईसा पश्चात् छठी शताब्दी में भारत में धार्मिक अशांति या कलह–क्लेश को मिटाने के लिए परमधाम से एक धर्मपिता का आगमन होता है। वह वास्तव में **शंकराचार्य** की आत्मा ही थी, जो एक 8 वर्षीय बालक के तन में प्रवेश कर **सन्यास धर्म** की स्थापना करती है। हालाँकि उनके पहले भी बौद्ध भिक्षु घरबार छोड़ मठों में रहते थे; किंतु वहाँ भिक्षु और भिक्षुणियाँ एक साथ रहते थे; इसलिए उन्हें पूर्ण सन्यासी नहीं कहेंगे।

इसके पश्चात्, **कल्पवृक्ष के अंतिम भाग अर्थात् कलियुग** का प्रारम्भ होता है, जहाँ अल्प अवधि में अनेक धर्मों एवं मत–मतान्तरों की स्थापना होती है और इसके फलस्वरूप, मनुष्यात्माएँ आस्तिक से लगभग नास्तिक बनने लग जाती हैं। द्वापर के अंत और कलियुग के प्रारम्भ में, जहाँ एक ओर अरब देशों में **हजरत मोहम्मद** द्वारा **मुस्लिम धर्म** की स्थापना होती है, उसके मुकाबले भारत में (आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व) **गुरूनानक** द्वारा **सिक्ख धर्म** की स्थापना होती है। कलियुग के अंतिम 200/300 वर्षों में एक ओर भारत में **स्वामी दयानंद सरस्वती** द्वारा **आर्य समाज** नामक धर्म की स्थापना होती है, तो दूसरी ओर रूस में लेनिन–स्टालिन द्वारा **नास्तिक धर्म या साम्यवाद** की स्थापना होती है। हालाँकि लेनिन से पूर्व भी साम्यवादी विचारधारा का प्रारम्भ हुआ था; किंतु वास्तव में सर्वप्रथम जनसत्ता केवल लेनिन को ही मिली जिन्होंने रूस में राजाई का अंत कर दिया था। अतः वे ही नास्तिक धर्म के वास्तविक संस्थापक हैं। इसके अलावा, कलियुग में कई छोटे–2 मत–मतांतरों, मठों आदि की स्थापना हुई। द्वापरयुग से अनेक धर्मों के चक्रों में फिरते–2 मनुष्यात्माएँ कलाहीन, गुणहीन और लगभग नास्तिक बन जाती हैं, तब कलियुग के अंतिम समय में स्वयं निराकार शिव एक साधारण मनुष्य के तन में आकर, मनुष्य सृष्टि से हर धर्म की चुनी हुईं आत्माओं को एकत्र करके, उन्हें राजयोग सिखाकर एक माला में पिरोते हैं। परमपिता परमात्मा कहते हैं कि **"मैं**

ही द्वापरयुग से अत्याचार सहती आ रही भारत की माताओं और कन्याओं को आकर ज्ञान अमृत का कलश देता हूँ।'' भारत की इन्हीं शक्तियों या ज्ञान–गंगाओं तथा उनके युगल मणकों को **वैजयंती माला** के रूप में चित्र में दर्शाया गया है। इस माला में लाल फूल के रूप में स्वयं परमपिता शिव हैं तथा प्रथम युगल मणके हैं इस सृष्टि के मात–पिता अर्थात् जगदम्बा और जगतपिता (या प्रजापिता), जो अभी सृष्टि पर कार्य कर रहे हैं। इस माला में नास्तिक धर्म को छोड़कर, 9 मुख्य धर्मों की मुख्य आत्माएँ हैं, जो परमपिता परमात्मा के कार्य में विशेष सहयोगी बनती हैं; इसलिए उन धर्मों के अनुयायी किसी और बाह्याडम्बरों को लेकर आपस में क्यों न लड़ें; पर हरेक यह माला ज़रूर जपते हैं। चूँकि नास्तिक धर्म न आत्मा, न परमात्मा और न परमात्म ज्ञान को मानता है; इसलिए इस माला में उसे कोई स्थान नहीं मिलता।

जहाँ देवी–देवता सनातन धर्म की नींव स्वयं निराकार परमपिता परमात्मा रखते हैं, वहीं अन्य धर्मों की नींव देहधारी धर्मपिताएँ रखते हैं। चूँकि परमपिता शिव इस सृष्टि के रचयिता हैं; अतः वे देवी–देवता धर्म की नींव रखने के लिए सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ प्रजापिता का आधार लेते हैं। बाकी धर्मपिताएँ अपनी–2 शक्ति के अनुसार नम्बरवार मनुष्यों का आधार लेते हैं। धर्म स्थापन करने के बाद हर धर्मपिता एवं उनकी आधारमूर्त आत्मा अपने–2 धर्म में ही पुनर्जन्म लेती रहती है और संगमयुग प्रारम्भ होते ही हर धर्म की आधारमूर्त आत्मा परमपिता शिव से ज्ञान प्राप्त कर ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मापुत्र बन जाती है; किंतु उन धर्मों के धर्मपिताएँ संगमयुग के अंत में इन आधारमूर्त आत्माओं के द्वारा ज्ञान प्राप्त कर उनको पहचानते और शक्ति प्राप्त करते हैं और जब संगमयुग में हर धर्म की आधारमूर्त आत्माएँ हैं तो ज़रूर उनको जन्म देने वाली बीजरूप आत्माएँ भी होती हैं; क्योंकि जड़ों से भी शक्तिशाली बीज होते हैं। संगमयुग में जो ब्राह्मण आत्माएँ दादा लेखराज (टाइटलधारी प्रजापिता ब्रह्मा) द्वारा सुनाए गए बेसिक ज्ञान को ही सर्वोपरि मानते हैं और धारण करते हैं, वे हैं **'आधारमूर्त आत्माएँ'** और जो बेसिक ज्ञान के साथ–2 प्रजापिता ब्रह्मा बनाम शंकर द्वारा सुनाए गए गुह्य ज्ञान (एडवांस ज्ञान) को भी पहले–2 समझते और धारण करते हैं, वे हैं **'बीजरूप आत्माएँ।'**

इस प्रकार कल्पवृक्ष का यह चित्र एक अनूठा चित्र है, जो अपने आप में विश्व के सभी धर्मों के इतिहास को समाए हुए है, जिसे पहचान कर मनुष्यात्माओं को परमपिता परमात्मा से मुक्ति–जीवनमुक्ति का वर्सा मिलता है।

कवर चित्र नं. 4 (**सीढ़ी**) :–

ज्ञानियों, महात्माओं और दार्शनिकों ने पुरातन समय से ही मनुष्य के जन्म से पूर्व और मृत्यु के बाद के रहस्यों को जानने का बहुत प्रयास किया है। चूँकि इस्लाम और क्रिश्चियन धर्मों में आत्मा के पूर्व जन्मों को मान्यता नहीं दी गई है; इसलिए उन धर्मखण्डों के साहित्य या धार्मिक पुस्तकों में इस विषय पर कोई चर्चा नहीं की गई है; किंतु भारत में पूर्वजन्म की मान्यता सदियों से रही है; इसलिए इससे सम्बंधित ग्रंथों या पुस्तकों की कोई कमी नहीं है; किंतु केवल एक भूल के कारण भारतवासी अपने स्वर्णिम इतिहास और विश्व की अनेक सभ्यताओं और धर्मों के उद्भव एवं विकास में अपने योगदान को भूल गए हैं। वह भूल है देह–अभिमान के कारण यह समझना कि आत्मा 84 लाख योनियों में जन्म लेती है। फिर भी भगवान के अवतरण एवं मनुष्यों के पूर्वजन्मों को मान्यता देने के कारण ही भारत आज शिव भगवान की कर्मभूमि बना है।

परमपिता शिव ही आकर मनुष्य आत्माओं को उनके अनेक जन्मों की कहानी सुनाते हैं। चूँकि वे ही जन्म–मरण के चक्र से न्यारे हैं और त्रिकालदर्शी हैं। वे आकर सबसे पहले इस भ्रम को मिटाते हैं कि मनुष्यात्मा अपने कर्मानुसार मनुष्य के रूप में ही पुनर्जन्म लेती है, न कि पशु–पक्षियों के रूप में। चूँकि भारत ही सारे विश्व की सभ्यताओं, संस्कृतियों और धर्मों का उद्गम स्थल है; इसलिए वे परमपिता शिव आकर पहले **भारत के उत्थान और पतन की ही कहानी** सुनाते हैं। शिव भगवानुवाच है कि **''मनुष्यात्मा इस 5000 वर्ष के ड्रामा में या सृष्टि–चक्र में अधिक से अधिक 84 जन्म लेती है, न कि 84 लाख योनियों में भ्रमण करती है।''** जैसा कि पहले अध्याय में स्पष्ट किया गया है।

अब भारत कौन है? क्या समुद्र एवं हिमालय से घिरे इस भूखंड को ही भारत कहेंगे? नहीं, भारत तो वास्तव में यह श्रेष्ठातिश्रेष्ठ आत्मा (या परम आत्मा) है, जो कि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का

प्रतिनिधित्व करती है। भारत माता है तो ज़रूर पिता भी होना चाहिए; क्योंकि भारत में तो केवल युगल रूप का गायन व पूजन होता है। यही भारत माता एवं पिता 5000 वर्ष के इस नाटक के आरम्भ में लक्ष्मी–नारायण थे। अतः इस चित्र में सृष्टि के मात–पिता और उनके साथ हम बच्चों के 84 जन्मों की कहानी बताई गई है। सतयुग के आदि में महाराजकुमार एवं महाराजकुमारी के रूप में श्री कृष्ण एवं श्री राधे संगमयुगी लक्ष्मी–नारायण के यहाँ जन्म लेते हैं और बड़े होने पर स्वयंवर के बाद उन्हें भी लक्ष्मी–नारायण की उपाधि मिल जाती है। इस प्रकार संगमयुगी लक्ष्मी–नारायण के अलावा सतयुग में ल०ना० की 8 गद्दियाँ (पीढ़ियाँ) चलती हैं, जो **'सूर्यवंशी'** पीढ़ियाँ कहलाती हैं; किंतु वहाँ कृष्ण के साथ न तो कंस होता है, न ही भागवत में वर्णित चरित्र और न ही महाभारत का युद्ध घटित होता है; क्योंकि भगवान शिव द्वारा स्थापित स्वर्ग में दुःख–अशांति का नामोनिशान नहीं होता। वास्तव में ये सभी कथाएँ सूक्ष्म रूप में संगमयुग में घटती हैं और द्वापरयुग में कथाओं के रूप में मार्गदर्शन हेतु ऋषियों द्वारा लिखी जाती हैं।

सतयुग के अंतिम ल०ना० की सन्तानों को राज्य करने का प्रारब्ध प्राप्त नहीं होता; क्योंकि उन्होंने संगमयुग में पूरा पुरुषार्थ नहीं किया था। अतः राज्य की बागडोर श्री सीता–राम नामक देवताओं के हाथ में आ जाती है, जिसके साथ ही त्रेतायुग एवं **'चंद्रवंश'** का प्रारम्भ होता है। त्रेतायुग में देवताएँ 12 जन्म लेते हैं; इसलिए यहाँ श्री सीता–राम की 12 गद्दियाँ चलती हैं। जैसे सतयुग में कृष्ण के साथ कंस नहीं होता है, उसी प्रकार यहाँ राम के साथ रावण नहीं होता। भागवत और महाभारत की भाँति रामायण की घटनाएँ भी सूक्ष्म रूप में संगम पर घटती हैं, जो बाद में रामायण की कथा के रूप में द्वापरयुग में लिखी जाती है। रावण–राज्य अर्थात् पाँच विकारों का राज्य तो द्वापरयुग में आरम्भ होता है। त्रेतायुग के आदि में भारत की जनसंख्या लगभग 2 करोड़ होती है और इस युग के अंत तक 9–10 करोड़ तक पहुँच जाती है। त्रेता के आरम्भ में देवताएँ 14 कला सम्पूर्ण होते हैं; लेकिन 12 जन्म लेते–लेते 6 कलाएँ और घट जाती हैं। ये कलाएँ वास्तव में आत्मिक स्थिति की विभिन्न अवस्थाएँ हैं, जो चंद्रमा की भाँति सतयुग से कलियुग तक घटतीं और सिर्फ संगमयुग के शूटिंग काल में बढ़ती हैं। त्रेतायुग भी 1250 वर्ष का होता है; किंतु यहाँ सतयुग की तुलना में 4 जन्म अधिक लेने के कारण उसके अनुपात में आयु एवं सुख भी कम होता है। सतयुग एवं त्रेतायुग को मिलाकर **'राम–राज्य'** कहा जाता है; क्योंकि जो आत्माएँ स्वर्णिम संगमयुग पर लक्ष्मी–नारायण के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं वही त्रेतायुग में प्रथम सीता–राम का भी पार्ट बजाती हैं।

त्रेतायुग के अंत में जब आत्मा में केवल 8 कलाएँ रह जाती हैं तब सभी आत्माएँ कुछ–न–कुछ देह–अभिमान में आ जाती हैं। इसी के साथ स्वर्ग की अवधि समाप्त होकर **'रावण–राज्य'** या नर्क का समय या द्वापरयुग प्रारम्भ होता है। द्वापरयुग भी 1250 वर्ष का होता है, जिसमें आत्माएँ 21 जन्म लेती हैं। देह–अभिमान में आते ही देवताएँ साधारण मनुष्य बन जाते हैं और काम, क्रोधादि पंच विकारों के वशीभूत होकर, दुःख एवं अशांति के दलदल में फँस जाते हैं। द्वापर से अधिकतर कर्म, विकर्म होते हैं; क्योंकि देह–अभिमान में कर्म किए जाते हैं। इस प्रकार द्वापरयुग से कर्मबंधनों का एक सिलसिला प्रारम्भ हो जाता है, जो संगमयुग के अंत में समाप्त होता है। द्वापर से, पाप कर्मों के कारण, दुःखी मनुष्य शांति और सुख के लिए भगवान का आश्रय लेते हैं। सनातन धर्म की आत्माएँ सर्वप्रथम मंदिरों का निर्माण कर शिवलिंग के रूप में उनकी अव्यभिचारी पूजा प्रारम्भ करती हैं, जिन्होंने उन्हें संगमयुग पर देवी–देवता बनाया था। इस युग के आरम्भ में **राजा विक्रमादित्य** द्वारा निर्मित **सोमनाथ मंदिर** इसका साक्षी है। वैसे संसार भर में खुदाइयों में द्वापरयुगीन शिवलिंग या शंकर की नग्न मूर्तियाँ पाई गई हैं। बाद में भारतवासी अपने ही पवित्र रूप अर्थात् सतयुगी देवी–देवताओं की पूजा करना प्रारम्भ करते हैं। सर्वप्रथम श्री लक्ष्मी–नारायण के मंदिर तथा तत्पश्चात् श्री सीता एवं श्री राम के मंदिर बनवाए जाते हैं। जैसा कि चित्र में स्पष्ट है कि देवताओं की युगल रूप में पूजा करने वाले ताजधारी हैं, जबकि कृष्ण की सिंगल पूजा करने वालों को ताज नसीब नहीं होता। इससे भारत में माता के रूप में देवी को न दिया जाने वाला सम्मान एवं उसका परिणाम स्पष्ट होता है। द्वापरयुग के प्रारम्भ में कुछ ही समय बाद भारत में ऋषियों द्वारा शास्त्रों की रचना का कार्य प्रारम्भ होता है; जैसे– **भगवद्गीता, वेद, उपनिषद, रामायण, महाभारत** आदि। जैसा कि कल्पवृक्ष के चित्र में बताया गया है कि द्वापरयुग से अन्य धर्मों की स्थापना भी प्रारम्भ हो जाती है; चूँकि इस चित्र में भारत के 84 जन्मों की कहानी का ही चित्रण है; इसलिए यहाँ अन्य धर्मों के उद्भव और विकास की चर्चा नहीं की जा रही है। द्वापरयुग से ही भारत में विदेशी आक्रमणकारियों का आगमन और भारत पर उनका दुष्प्रभाव

आरम्भ हो जाता है। सबसे पहले तो भारतवासी अपने धर्म का नाम ही भूल जाते हैं और विदेशियों द्वारा दिया गया नाम **'हिंदू धर्म'** ही प्रचलित हो जाता है।

कलियुग का प्रारम्भ होते ही हिंदू धर्म में भक्ति भी व्यभिचारी बनने लगती है अर्थात् एक शिव की भक्ति से आरम्भ होकर अब वह हज़ारों–करोड़ों देवी–देवताओं की पूजा में परिवर्तित हो जाती है। पशु योनियों के रूप में देवताओं की भक्ति तथा पेड़–पौधों एवं जड़ वस्तुओं की पूजा भी प्रचलित हो जाती है। यहाँ तक कि पंच तत्वों के बने देहधारियों की भी पूजा प्रारम्भ हो जाती है। व्यभिचारी भक्ति के साथ अंधविश्वास, कुरीतियाँ और अर्थहीन रीति–रस्म, रिवाज़ भी भारतीय समाज में व्याप्त हो जाते हैं। देवी–देवताओं की भव्य पूजा कर उन्हें पानी में डुबो देना भी अर्थहीन रिवाज़ों का ही एक उदाहरण है। भारत में धर्म के पतन के साथ ही मनुष्यों के चरित्र का पतन भी कलियुग अंत तक चरम सीमा पर पहुँच जाता है। अधिकतर मनुष्य धर्मभ्रष्ट, कर्मभ्रष्ट और नास्तिक बन जाते हैं। धर्मसत्ता और राज्यसत्ता, दोनों का ही पतन हो जाता है। कलियुग में मनुष्यात्माएँ 42 जन्म लेती हैं। इसलिए एक ओर जहाँ जनसंख्या बढ़ती है तो दूसरी ओर आयु कम हो जाती है। रोग, शोक एवं अशांति बढ़ जाती है। किसी समय सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारत, अन्य देशों तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से आर्थिक सहायता माँगने की स्थिति तक पहुँच जाता है। खास भारत एवं आम विश्व के इस पतन को जब वेद, शास्त्र, गुरू या धर्मपिताएँ नहीं रोक पाते तब परमपिता शिव को विश्व का उद्धार करने के लिए भारत भूमि पर अवतरित होना पड़ता है।

5000 वर्ष के इस ड्रामा के अंत में, **भगवान एक साधारण वृद्ध मानव के तन में प्रवेश कर गीता ज्ञान एवं राजयोग की शिक्षा से भारत को स्वर्ग बनाते हैं,** जहाँ भगवान को पहचानकर पवित्र बनने वाली विश्व की श्रेष्ठ आत्माएँ एकत्रित होती हैं। उनके अवतरण का यह समय **'संगमयुग'** कहलाता है, जिसके अंत में विनाश के पश्चात् भारत के अलावा सभी धर्मखंड 2500 वर्षों के लिए समुद्र में समा जाते हैं। महाविनाश के बाद अधिकतर आत्माएँ सज़ाएँ खाकर, पवित्र होकर, उस निराकार के साथ परमधाम लौट जाती हैं; किंतु कुछ श्रेष्ठ आत्माएँ भारत खंड में बच जाती हैं, जो कि देवताई सृष्टि का आरम्भ करती हैं। ये बीजरूप साढ़े चार लाख आत्माएँ अपने बच्चों सहित पूरे 84 जन्म लेती हैं; परंतु उसके बाद जो आत्माएँ परमधाम से उतरकर आती हैं वे कालक्रमानुसार कम जन्म लेती जाती हैं। भारत के आध्यात्मिक पतन के साथ–2 विश्व का भी पतन होता है; किंतु भारत की तुलना में विदेशी उतना अधिक दुःखी तथा पतित नहीं बनते हैं; क्योंकि उनका पार्ट इस सृष्टि में द्वापरयुग से प्रारम्भ होता है। भारतवासी सतयुग में जितने श्रेष्ठ और पावन बनते हैं, कलियुग अंत तक उतने ही अधिक भ्रष्ट तथा पतित बन जाते हैं। इसलिए कलियुग अंत में जब महाविनाश होगा तब विदेशी तो अणु बम्बों की विध्वंसकारी शक्ति के चलते अधिक दुःख अनुभव किए बिना कुछ ही क्षणों में शरीर छोड़ देंगे; किंतु भारतवासी, जिनके पापों का खाता अधिक है, वे लम्बे समय तक दुःख–दर्द एवं पश्चाताप का अनुभव करते हुए, प्राकृतिक आपदाओं एवं गृह युद्ध द्वारा पापों को विशेष रूप से मिटाकर, परमधाम लौटेंगे; परंतु विनाश की इस विभीषिका के बीच परमपिता परमात्मा का अलौकिक परिवार अतीन्द्रिय सुख–शांति का उसी प्रकार अनुभव करेगा जैसे कि भक्त प्रह्लाद की कथा में प्रसिद्ध है।

जो आत्माएँ त्रिमूर्ति शिव भगवानुवाच को समझकर पवित्र बनेंगी, वे पुनः मनुष्य से देवता बनेंगी और भारत में सतयुगी स्वर्ग का शुभारम्भ करेंगी; किंतु जो जानकर भी अनजान रहेंगी और पापों का बोझ राजयोग की प्रक्रिया से नहीं मिटाएँगी, वे अणु युद्ध, विश्व युद्ध, प्राकृतिक आपदाओं, हिंसक युद्ध एवं (धर्मराज की सज़ाओं) आदि के द्वारा पापों का विनाश कर परमधाम लौटेंगी तथा अपने समय पर पुनः अगले कल्प में अपना पार्ट बजाने आएँगी। इस प्रकार भारत के 84 जन्मों की इस कहानी की हर 5000 वर्ष बाद पुनरावृत्ति होती रहती है।

गीता के निराकार भगवान शिव–शंकर भोलेनाथ या साकार श्री कृष्ण की आत्मा उर्फ दादा लेखराज?

भारतीयों के लिए ढाई हज़ार साल से जीवन के हर क्षेत्र में मार्गदर्शक का कार्य करने वाली **श्रीमद्भगवद्गीता** सर्व शास्त्र शिरोमणि है, इस बात में कोई संदेह नहीं है; किंतु भारत के इतिहास में इसी गीता पर जितने विद्वानों और आचार्यों ने टीकाएँ लिखी हैं, उतनी शायद किसी और शास्त्र पर नहीं लिखी

गई होंगी, जो यह सिद्ध करता है कि यह शास्त्र ऐसा अनूठा है कि मनुष्यों द्वारा विभिन्न प्रकार से की गई इसकी व्याख्या ने सारे मनुष्यों को कभी संतुष्ट नहीं किया है। किसी ने सच ही कहा है– **"कै जाने कवि या कै जाने रवि।"** किसी कविता की सही व्याख्या उसका रचनाकार अर्थात् कवि ही कर सकता है अथवा ज्ञान सूर्य रवि भगवान कर सकता है। बाकी जितने भी मनुष्य उस कविता की जितनी भी व्याख्याएँ करें, वह किसी न किसी दृष्टिकोण से अधूरी ही होंगी।

जन सामान्य के मन में तो यही बात बैठा दी गई है कि गीता के ज्ञानदाता श्री कृष्ण थे, जिन्होंने द्वापरयुग में कुरुक्षेत्र की रणभूमि में, रथ पर विराजमान होकर, अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था; किंतु आध्यात्मिक और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखें तो गीता किसने, किसको, कब, कहाँ और कैसे सुनाई थी– ये सारे ही प्रश्न विवादास्पद हैं। सर्वप्रथम प्रश्न तो यही उठता है कि गीता किसने और किसको सुनाई थी। **गीता और सत्यनारायण की कथा यह सिद्ध करती है कि भगवान तो साधारण, बूढ़े और अनुभवी मनुष्य के रूप में प्रकट होते हैं।**

गीता में ही लिखा हुआ है–

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्।। (गीता 9/11)

साथ ही यह भी लिखा हुआ है कि ईश्वर तो अजन्मा, अभोक्ता और अव्यक्त है,

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।। (गीता 4/6)
यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असंमूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते।। (गीता 10/3)

गीता में उसी आदि–अनादि पुरुष की स्तुति की गई है,

तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी। (गीता 15/4)

–अर्थात् मैं उस आदि–अनादि पुरुष शिवशंकर को प्रणाम करता हूँ, जिससे इस संसार वृक्ष की आदि प्रवृत्ति हुई है।

गीता का वह आदि पुरुष स्वयं बता रहा है,

अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः। (गीता 10/2)

–अर्थात् मैं ही देवों और महर्षियों सबका आदि (देव महादेव) हूँ। उसी ने प्राचीनकाल में कर्मयोग की वह प्रसिद्ध निष्ठा प्रचलित की थी, जिसके कारण भारत को **जैन** परम्परानुसार भी कर्मभूमि की संज्ञा मिली है,

निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ... कर्मयोगेन योगिनाम्। (गीता 3/3)

यहाँ ध्यान रहे कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं दिया था, अपितु उसी आदि–अनादि पुरुष ने गृहस्थधर्म की शिक्षा के लिए गृहस्थ अर्जुन को **सहज राजयोग** सिखाने के हेतु दिया था। इस बारे में अधिक विस्तार में न जाकर प्रकरणवश कुछ प्रसिद्ध इतिहासकारों के उद्धरण प्रस्तुत करते हैं:–

होपकिन्स का विचार है– **"(गीता का) अब जो कृष्णप्रधान रूप मिलता है, वह पहले कोई विष्णुप्रधान कविता थी और इससे भी पहले वह कोई एक निस्सम्प्रदाय रचना थी"।** (रिलीजन्स ऑफ इण्डिया (1608), पृष्ठ 386)। रिलीजियस लिटरेचर ऑफ इण्डिया (1620), पृष्ठ 12–14 पर **फर्कुहार** ने लिखा है– **"यह (गीता) एक पुरानी पद्य उपनिषद है, जो कि सम्भवतः श्वेताश्वतरोपनिषद के बाद लिखी गई है और जिसे किसी कवि ने कृष्णवाद के समर्थन के लिए ईस्वी सन् के बाद वर्तमान रूप में ढाल दिया है।" गर्वे** के अनुसार– **"भगवद्गीता पहले एक सांख्य–योग सम्बन्धी ग्रंथ था, जिसमें बाद में कृष्णवासुदेव पूजा पद्धति आ मिली और ई०पूर्व तीसरी शताब्दी में इसका मेलमिलाप कृष्ण को विष्णु का रूप मानकर, वैदिक परम्परा के साथ बिठा दिया गया। मूल रचना ईस्वी पूर्व 200 में लिखी गई थी और इसका वर्तमान रूप ईसा की दूसरी शताब्दी में किसी वेदान्त के अनुयायी द्वारा तैयार किया गया है"। होल्टज मैन गीता को सर्वेश्वरवादी कविता का बाद में विष्णुप्रधान बनाया गया रूप मानता है। कीथ का भी विश्वास है कि मूलतः गीता श्वेताश्वतर के ढंग की उपनिषद थी;** परन्तु बाद में उसे कृष्ण पूजा के अनुकूल ढाल दिया गया। –(राधाकृष्णन **'गीता'** की भूमिका, पृष्ठ 17 से उद्धृत)

साकारी स्टेजधारी कृष्ण का तो माँ के गर्भ से जन्म हुआ था। उन्होंने जीवन के सभी सुखों का भोग किया, गुरू संदीपनी से शिक्षा प्राप्त की। उन्हें अधिकतर बाल्यावस्था में ही दिखाया गया है; इसलिए सारा संसार उन्हें अपने पिता के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता। दूसरी बात, पौराणिक कथाओं में प्रसिद्ध है कि द्वापरयुग में गीता श्री कृष्ण ने केवल अर्जुन को एक रथ पर विराजमान होकर सुनाई; किंतु यह भी प्रसिद्ध है कि महर्षि व्यास ने महाभारत शास्त्र की रचना की, जो कि जन–जन तक संस्कृत में पहुँची। ऐतिहासिक दृष्टि से ये तथ्य विवादास्पद हैं। वास्तव में, गीता है तो सर्व शास्त्र शिरोमणि; किंतु वह द्वापरयुग में नहीं, अपितु 5000 वर्ष के चतुर्युगी मनुष्य सृष्टि–रूपी चक्र में, कलियुग के अंत और सतयुग की आदि, अर्थात् पुरुषोत्तम संगमयुग में सुनाई गई थी, जिसकी अभी पुनरावृत्ति हो रही है। **यदि गीता द्वापरयुग में ही सुनाई गई थी तो फिर पापी कलियुग कैसे आ गया?** भगवान के अवतरण के पश्चात् तो सतयुग आना चाहिए था, न कि महापापी कलियुग और गीता सुनाई जाती है संगमयुग में, जबकि सृष्टि पर सारे धर्म, धर्मावलंबी और अपने–2 अंतिम जन्मों में उन धर्मों के धर्मपिता भी विद्यमान होते हैं।

तभी तो गीता में कहा गया है– **"सर्व धर्मों का त्याग कर मुझ एक परमपिता परमात्मा की शरण में आ जाना।"**

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। (गीता 18/66)

हिन्दुओं के पारम्परिक दृष्टिकोण से तो जब द्वापरयुग में गीता सुनाई गई थी तब मुस्लिम, सिक्ख आदि धर्म तो नहीं थे, फिर गीता में उक्त श्लोक कैसे आ गया? और भगवान द्वारा गीता कोई संस्कृत जैसी कठिन भाषा में नहीं सुनाई गई थी, वह तो सर्व साधारण को समझ में आने वाली भाषा, जैसे हिन्दी में ही सुनाई जा रही है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी देखें तो संस्कृत कभी जन साधारण की भाषा नहीं रही है। फिर सर्व साधारण मानुषी तन में आए हुए भगवान भला ऐसी क्लिष्ट भाषा का प्रयोग कैसे कर सकते हैं? साथ ही गीता श्री कृष्ण जैसे आकर्षक रंग–रूप वाले तथा पुनर्जन्म के चक्र में आने वाले किसी साकारी राजकुमार के द्वारा नहीं, अपितु अजन्मा, अभोक्ता, निराकार भगवान शिव द्वारा कलियुग के अंत में किसी साधारण मनुष्य तन–प्रजापिता ब्रह्मा के द्वारा केवल एक अर्जुन को नहीं, अपितु अर्जुन जैसे कई अन्य गृहस्थियों को दिया जा रहा है। गीता में लिखा है– **"हे अर्जुन, तू अपने जन्मों को नहीं जानता। मैं तुझे तेरे अनेक जन्मों की कहानी सुनाता हूँ।"**

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप।। (गीता 4/5)

किंतु जो कृष्ण स्वयं जन्म और मरण के चक्र में आने वाले हैं, वे अन्य मनुष्यात्माओं को सच्ची मुक्ति और जीवनमुक्ति का वर्सा कैसे दे सकते हैं और उनके जन्मों की कहानी कैसे सुना सकते हैं? इससे सिद्ध होता है कि अनेक जन्मों की कहानी साकारी श्री कृष्ण द्वारा नहीं, अपितु अजन्मा परमपिता परमात्मा शिव द्वारा सुनाई जाती है, जो कि गीता या अमरकथा के रूप में प्रसिद्ध है।

गीता के संबंध में उपर्युक्त मत, जो कि आम धारणा से पूर्णतया भिन्न है, ब्रह्माकुमारी संस्था के साथ–2 **कंपिला, उत्तर प्रदेश** स्थित **आध्यात्मिक ईश्वरीय विश्वविद्यालय** का भी यही मत है कि सन् 1936–37 से प्रारंभ हुए संगमयुग पर निराकार भगवान शिव द्वारा अपने अति साधारण साकार मनुष्य रथ के द्वारा सुनाया गया ईश्वरीय ज्ञान, जिसे **'मुरली'** कहा जाता है, वही **सच्ची गीता** है, जिसके आधार पर ढाई हज़ार साल बाद प्रारंभ होने वाले द्वापरयुग में संस्कृत की गीता लिखी जाएगी। हालाँकि ब्रह्माकुमारी संस्था यह तो मानती है कि निराकार शिव ही गीता के भगवान हैं; किंतु वे दादा लेखराज ब्रह्मा उर्फ कृष्ण की आत्मा को ही संसार भर में भगवान के साकार माध्यम के रूप में प्रचार और प्रसार कर रही है, जबकि यह सर्वविदित है कि दादा लेखराज का तो स्वर्गीय स्थापना के पहले ही सन् 1969 में ही देहावसान हो चुका है। फिर भला वे सारे विश्व के पिता अर्थात् प्रजापिता ब्रह्मा कैसे कहला सकते हैं?

कार्यवाहक ब्रह्मा दादा लेखराज के मुख के द्वारा सुनाई गई ज्ञान मुरलियों में निराकार परमपिता परमात्मा शिव ने गीता एवं गीता ज्ञानदाता के संबंध में निम्नलिखित महावाक्य उच्चारे हैं :–

❍ **"यह है नई दुनिया के लिए नया ज्ञान। देने वाला एक ही बाप है। कृष्ण यह ज्ञान नहीं देता। कृष्ण को पतित–पावन नहीं कहा जाता। पतित–पावन तो एक ही परमपिता परमात्मा है, जो पुनर्जन्म रहित है और गीता में नाम डाल दिया है– कृष्ण का, जो पूरे 84 जन्म लेते हैं।"** (मु.ता.28.10.87 पृ.2 आ.)

❍ "अब गीता को जन्म किसने दिया है, यह है टॉपिक। (गीता) जयन्ती कहते हैं तो ज़रूर जन्म भी हुआ ना। उनको जब कहते हैं, श्रीमद् भगवत गीता जयन्ती, तो ज़रूर उनको जन्म देने वाला भी चाहिए ना। सब कहते हैं, श्रीकृष्ण भगवानुवाच। तो फिर श्रीकृष्ण पहले आता, गीता पीछे हो जाती। अब गीता का रचयिता ज़रूर चाहिए। अगर श्रीकृष्ण को कहते तो पहले श्रीकृष्ण, गीता पीछे आनी चाहिए; परन्तु श्रीकृष्ण तो छोटा बच्चा था। (वह बच्चाबुद्धि कृष्ण उर्फ ब्रह्मा तो अपने साक्षात्कारों के गुह्यार्थ को ही नहीं समझ सका।) वह गीता सुना न सके। यह सिद्ध करना होगा कि (सच्ची) गीता (माता) को जन्म देने वाला कौन? यह है गुह्य बात। भारत में कुछ रोला है सो इसी बात पर है। कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) तो जन्म लेता है माता के गर्भ से। वह तो सतयुग का प्रिन्स है।" (मु.ता.24.11.88 पृ.1 आ.)

❍ **"श्रीकृष्ण को वृक्षपति नहीं कहेंगे (वह तो सृष्टि वृक्ष का पहला पत्ता है)। परमपिता परमात्मा ही (प्रजापिता द्वारा) मनुष्य सृष्टि का बीजरूप, क्रियेटर है। कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) को क्रियेटर नहीं कहेंगे। वह तो सिर्फ दैवीगुण वाला मनुष्य है।"** (मु.ता.22.2.88 पृ.1 म.)

❍ **"कृष्ण तो सबका (बीजरूप) फादर नहीं है।"** (मु.ता.30.9.98 पृ.2 आ.)

❍ "कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) को सभी आत्माओं का (बीजरूप) बाप नहीं कहेंगे। आत्माओं का बाप परमपिता परमात्मा (प्रजापिता द्वारा) कहते हैं कि मामेकम् याद करो।"
(मु.ता.13.9.88 पृ.3 अंत)

ब्रह्माकुमारी संस्था द्वारा प्रकाशित **त्रिमूर्ति शिव** के चित्र में दादा लेखराज को ब्रह्मा के रूप में चित्रित किया गया है; किंतु सन् 1969 में दादा लेखराज के निधन के पश्चात् कौन–सी मनुष्यात्माएँ शंकर तथा विष्णु की भूमिका अदा करेंगी, इसकी उन्हें जानकारी नहीं है; इसलिए शंकर तथा विष्णु के स्थान पर वही त्रिमूर्ति ब्रह्मा के भक्तिमार्गीय चित्र दिखाए गए हैं। **माउंट आबू से चलाई गई मुरलियों और अव्यक्त वाणियों के आधार पर आध्यात्मिक विद्यालय का मानना है कि सन् 1969 के बाद से निराकार परमपिता परमात्मा शिव एक और साकार मनुष्य रथ शिव–शंकर भोलेनाथ के द्वारा सभी मनुष्यात्माओं को गीता का सच्चा ज्ञान दे रहे हैं तथा सहज राजयोग सिखा रहे हैं, जिससे हर अर्जुन रूपी आत्मा मनुष्य से नं०वार पुरुषार्थ अनुसार देवता बन सके।** इस बात के प्रमाण दादा लेखराज के द्वारा सुनाई गई अनेकशः ज्ञान मुरलियों में ही मौजूद हैं, जिन्हें ब्रह्माकुमारी संस्था के सरपरस्त, अपनी गद्दी खो जाने के डर से स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं।

ब्रह्माकुमारी संस्था तथा आध्यात्मिक विद्यालय का मानना है कि दादा लेखराज की आत्मा ही आने वाले सतयुग में श्री कृष्ण के रूप में जन्म लेगी; किंतु ब्रह्माकुमारी संस्था द्वारा दादा लेखराज को गीता ज्ञानदाता शिव के साकार माध्यम के रूप में प्रचार–प्रसार किया जाना, स्वयं उनके मुख द्वारा सुनाई गई ज्ञान मुरलियों को नकारने का कार्य है। दादा लेखराज तो केवल सन् 1951 से 69 तक भगवान शिव के 'टेम्परेरी मनुष्य रथ' बने, जिस दौरान उन्होंने ब्रह्माकुमार–कुमारियों को एक माँ का प्यार दिया और उनके द्वारा उच्चारे गए भगवान शिव के महावाक्य गीता में ब्रह्माकुमार–कुमारियों के बीच प्रसिद्ध हुए; किंतु सन् 1951 से पहले तथा सन् 1969 में उनके निधन के पश्चात् इस बृहत ईश्वरीय कार्य का बीड़ा उनके पूर्व जन्म की **भागीदार वाली आत्मा** ने उठाया है, जो कि **वर्तमान समय निराकार शिव के मुकर्रर साकार माध्यम अर्थात् महादेव शिव–शंकर की भूमिका अदा कर रही है** और भविष्य स्वर्णिम संगमयुग में सत्यनारायण के रूप में और अगले 1250 वर्ष बाद प्रारंभ होने वाले त्रेतायुग में श्री राम की भूमिका अदा करेगी।

भगवान शिव ने दादा लेखराज के द्वारा गीता का ज्ञान अर्थात् मुरली सुनाई ज़रूर थी; किंतु उसमें छिपे गूढ़ रहस्यों का उद्घाटन अपने वर्तमान मुकर्रर रथ के द्वारा वर्तमान समय कर रहे हैं। **जैसे आम हिन्दुओं द्वारा अज्ञानवश भोलेनाथ शिव–शंकर के स्थान पर आकर्षक श्रीकृष्ण को गीता ज्ञानदाता मान लिया गया है, उसी प्रकार ब्रह्माकुमारी संस्था द्वारा अज्ञानवश साधारण शंकर या राम वाली आत्मा के स्थान पर**

आकर्षक शरीर वाले धनाढ्य दादा लेखराज अर्थात् कृष्ण वाली आत्मा को गीता ज्ञानदाता मान लिया गया है। ब्रह्माकुमारी संस्था द्वारा प्रकाशित ज्ञान मुरलियों में भी शिवबाबा से पहले दादा लेखराज (पिताश्री) का नाम डाल दिया गया है। यही वह एकज भूल है, जिसके कारण चतुर्युगी सृष्टि–चक्र में, द्वापरयुग से भक्तिमार्ग में संस्कृत की गीता के रचयिता के रूप में शिव–शंकर के स्थान पर श्री कृष्ण का नाम डाल दिया गया है। संस्कृत गीता में भगवान के लिए दी गई अव्यक्त, अजन्मा, अभोक्ता आदि की संज्ञाएँ वास्तव में शिव–शंकर पर हद और बेहद में लागू होती हैं, न कि श्रीकृष्ण पर। ❍ **"बाप कहते हैं कि गीता का भगवान मैं हूँ। गीता माता रची शिवबाबा ने, जन्म लिया कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) ने। उनके साथ राधे और सब आ जाते हैं। पहले हैं ही ब्राह्मण। बाप कहते हैं, कौन मूढ़मति हैं, हमारा नाम–निशान (लाश) ही गुम कर दिया? फिर मुझे ही आकर बताना पड़ता है कि गीता का भगवान मैं शिव परमात्मा हूँ। मैंने गीता रची। गीता से कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) बच्चा पैदा हुआ। तुमने फिर बाप के बदले बच्चे का नाम डाल दिया, यह है बड़ी भूल।"** (मु.13.12.88 पृ.2 अंत) ❍ "रुद्र (शंकर) से कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) बच्चा पैदा हुआ, तो उसमें बाप के बदले बच्चे का नाम डाल दिया।" (मु.ता.29.3.88 पृ.1 अंत) ❍ **"गीता है माई–बाप। गीता को माता कहा जाता है। और कोई पुस्तक को माता नहीं कहते।** इनका नाम ही है– गीता माता। अच्छा, उनको किसने रचा? पहले–2 पुरुष स्त्री को एडॉप्ट करते हैं ना।"(मु.ता.28.9.88 पृ.2 आ.) (तो ज़रूर शिव भोलेनाथ ने यज्ञ के आदि में भी गीता माता के उपरान्त टाइटलधारी दादा लेखराज ब्रह्मा को ही 18 अध्यायी गीता माता के रूप में एडॉप्ट किया)। ❍ "सारा मदार गीता को करेक्ट कराने पर है। गीता खण्डन होने (के) कारण भगवान की हस्ती गुम हो गई है।" (मु.ता.9.3.88 पृ.2 म.) ❍ "एक ही श्रीमत भगवत गीता के भगवान से ही भारत को माखन मिलता है। श्रीमत भगवत गीता को भी खण्डन किया हुआ है, जो ज्ञानसागर पतित–पावन निराकार परमपिता परमात्मा के बदले श्रीकृष्ण (उर्फ साकार ब्रह्मा) का नाम (पिताश्री) डाल खण्डन कर छाछ बना दिया है।" (मु.ता.31.10.78 पृ.2 म.) ❍ **"गीता तो है सभी शास्त्रों की मात–पिता। ऐसे नहीं कि सिर्फ भारत के शास्त्रों की मात–पिता है। नहीं, जो भी बड़े ते बड़े (कुरान–बाईबलादि) शास्त्र दुनिया में हैं, सभी की मात–पिता है।"** (मु.ता.5.2.83 पृ.1 म.) ❍ **"वह है स्वर्ग का रचयिता, सबका सहायक। ...कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) तो स्वयं रचना है। बगीचे का फर्स्टक्लास फूल है।"** (मु.ता.5.2.83 पृ.1 म.)

यही वह एकज भूल है, जिसके कारण भारत देश की दुर्गति हुई है, गीता खण्डित हो गई है और सभी धर्मशास्त्रों की माता होने के बावजूद भी गीता को अन्य धर्मावलंबियों द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है। इसी कारण अलग–2 विद्वानों द्वारा गीता की अलग–2 व्याख्या की गई है। शंकराचार्य ने उसी गीता के आधार पर आत्मा और परमात्मा को एक (अद्वैत) सिद्ध किया, जबकि माधवाचार्य ने आत्मा और परमात्मा को भिन्न (द्वैत) सिद्ध किया। गीता में काम विकार को महाशत्रु की संज्ञा दी गई है। दुनिया वाले इस बात को इसलिए स्वीकार नहीं करते; क्योंकि गीता के तथाकथित (झूठे) रचयिता श्री कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) की 8 पत्नियाँ और 16,108 गोपियाँ शास्त्रों में प्रसिद्ध हैं। यदि गीता ज्ञान दाता के रूप में महादेव शिव–शंकर का नाम आया होता तो संसार काम महाशत्रु वाली बात को सहज स्वीकार कर लेता; क्योंकि शंकर तो एक पत्नीव्रता या कामदेव को भस्म करने वाले के रूप में प्रसिद्ध है। शास्त्रों का ही उदाहरण लें, तो सत्यनारायण की कथा में साधारण, बूढ़े मानव के रूप में आए भगवान को पहचाना नहीं जाता।

भारत में गीता की मान्यता माता के रूप में भी है; किंतु भगवान शिव द्वारा वर्तमान समय दिए जा रहे ईश्वरीय ज्ञान में इस बात का भी स्पष्टीकरण दिया गया है कि गीता केवल ज्ञान का प्रतीक पुस्तक ही नहीं, अपितु एक चैतन्य मनुष्यात्मा का भी प्रतीक है, जो कि वर्तमान संगमयुग में ईश्वरीय परिवार की पालना करने के लिए **प्रजापिता** के साथ (भारतमाता

और) **जगदंबा** की भूमिका भी अदा कर रही है। इन्हें ही हिन्दू धर्म में **आदिदेव–आदिदेवी**, मुसलमानों में **आदम–हव्वा**, ईसाइयों में **एडम–ईव** तथा जैनियों में **आदिनाथ–आदिनाथिनी** के रूप में जाना जाता है।

अतः उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए यदि बालक श्रीकृष्ण (दादा लेखराज ब्रह्मा) के स्थान पर पिता शिव–शंकर को गीता ज्ञानदाता के रूप में प्रस्तुत किया जाए, तो गीता को सारे विश्व की आत्माओं के द्वारा भगवान की वाणी के रूप में सहज स्वीकार कर लिया जाएगा।

❍ **"भगवान ने गीता कब सुनाई? ज़रूर सभी धर्म (सर्वधर्मान्परित्यज्य अर्थात् हिन्दू–मुस्लिम–ईसाई आदि) होने चाहिए। सभी धर्मों के लिए वास्तव में एक गीता है मुख्य। सब धर्म वालों को मानना चाहिए। ...सभी धर्मों की गीता द्वारा सद्गति करने बाप आया हुआ है। गीता बाप की उच्चारी हुई है। उसमें बाप (प्रजापिता) के बदले बच्चे का नाम डाल मुश्किलात कर दी है।"** (मु.ता.21.2.93 पृ.1 मध्यांत)

❍ तुम जानते हो भोलानाथ कृष्ण (उर्फ ब्रह्मा) को नहीं कहा जा सकता। भक्तों का रखवाला कृष्ण नहीं, भगवान को कहा जाता है। **..........पहले–2 तो गीता का भगवान सिद्ध करना पड़े। गीता का भगवान भोलानाथ ही है।**